धर्म-सुधा-सार

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

मुद्रक तथा प्रकाशक

कला प्रेस, प्रयाग

सन् 1954

ओ३म्

धर्म-सुधा-सार

लेखक
मंगलाप्रसाद पारितोषिक प्राप्तकर्त्ता
श्री पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय एम० ए०
[प्रणेता—आस्तिकवाद, अद्वैतवाद, जीवात्मा, मनुस्मृति, शांकर-भाष्यालोचन, आर्य समाज, विधवा विवाह मिमांसा, आर्य ट्रैक्ठ माला, सर्व दर्शन सिद्धान्त संग्रह, शंकर, रामानुज दयानन्द, राजाराम मोहनराय, केशवचन्द्रसेन, दयानन्द, भगवत् कथा, हम क्या खावें ? कम्युनिज़्म, आर्योदय काव्य, धम्मपद, आर्यस्मृति, महिला व्यवहार चन्द्रिका, *Light of Truth, Landmarks of Svami Dayanand's Teachings.* आदि आदि]

मुद्रक तथा प्रकाशक
कला प्रेस, प्रयाग ।

प्रथमबार] १९५४ [मू० छः आना

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ संख्या
पहली कथा—जगत् का निर्माण	५
दूसरी कथा—वेदों का ह्रास और पुनरोद्धार	१४
तीसरी कथा—ईश्वर विचार	२६
चौथी कथा—जीव विचार	४८
पाँचवीं कथा—प्रकृति विचार	५१
छठवीं कथा—समाज की व्यवस्था	६०
सातवीं कथा—अपनी उन्नति के साधन	८७
आठवीं कथा—राष्ट्र-सेवा विचार	१०७
नवीं कथा—गाय की महिमा	११२
दसवीं कथा—भ्रान्ति निवारण और कुरीति-प्रतिषेध	१२०

ओ३म्

धर्म-सुधा-सार

पहली कथा

जगत का निर्माण

प्रातःकाल का समय था, ठंडी ठंठी हवा चल रही थी। पक्षी चहक रहे थे। पेड़ों से फूल पत्तों की भीनी भीनी सुगन्ध आ रही थी। कुटी की शोभा बड़ी रमणीक थी।

स्वामी धर्मानन्द जी प्रातःकाल से ही प्रभु भजन में लग जाते हैं। अनेक भक्त धीरे धीरे उनके पास जमा हो जाते हैं। प्रार्थना होती है, भजन गाये जाते हैं। फिर स्वामी जी का उपदेश होता है। धीरे धीरे भक्तों की संख्या बढ़ने लगी।

सब लोग मिलकर गाने लगे :—

गुण गाओ तुम प्रभू के,
झूम, झूम, झूम ॥१॥

सूरज में ज्योति उसकी,
शशि में चमक उसी की,
चमक रहे हैं उससे तारे,
घूम, घूम, घूम ॥२॥
रंग रंग के फूल खिले ये,
चरणों में है शीश झुकाते,
श्रद्धा से गुण तेरे गाते,
चूम, चूम, चूम ॥३॥
जिसने हमारी देह बनाई,
शोभा उसकी वरणी न जाई,
रम रहा वह सारे में,
रूम, रूम, रूम ॥४॥
पक्षी तेरी महिमा गावें,
कोयल बुलबुल तुमको ध्यावें,
मच रही तेरे नाम की,
धूम, धूम, धूम ॥५।

भजन गा चुकने पर स्वामी जी कहने लगे :— "भक्तो! सब ओर परमात्मा की ही महिमा दीख रही है। जिसको देखो वही उसका गुण गान कर रहा है। आस्मान की ओर देखो, सूर्य निकल रहा है, वायु चल रही है। कितना सुन्दर जगत दीख रहा है। यह सब ईश्वर की कृपा है। उसकी अपार दया से आज हम सब यहाँ बैठे हुये आनन्द मना रहे हैं। यदि ईश्वर की कृपा न

होती तो यह संसार न होता, न हम होते, न पृथ्वी होती और न सूर्य होता। न पेड़ होते। न पक्षी होते।

शिवदत्त—स्वामीजी जब सृष्टि नहीं थी तब क्या था?

स्वामी जी—प्रलय थी, जिसको ब्रह्म रात्रि कहते हैं। जब सृष्टि बन जाती है तो उसको ब्रह्म दिन कहते हैं। आजकल ब्रह्म दिन है। इसके बाद एक समय ऐसा आवेगा जब सब जगत नष्ट हो जायगा। न पृथ्वी रहेगी, न सूर्य्य होगा, न आदमी होंगे, न पशु, पेड़ पौधे। सबके सब नष्ट हो जायंगे। इसको कहते हैं प्रलय। जिस प्रकार रात के बाद दिन आता है और दिन के बाद रात इसी प्रकार ब्रह्म दिन और ब्रह्म रात्रि का हाल है? हम यह नहीं कह सकते कि ब्रह्म दिन पहले हुआ या ब्रह्म रात्रि पहले हुई।

ज्ञानचन्द्र—स्वामी जी! ब्रह्म दिन को आरम्भ हुये कितने दिन बीत गये?

स्वामीजी—वर्त्तमान सृष्टि को बने १९७२९४९०५५ एक अरब, सत्तान्नवे करोड़, उनतीस लाख, उनचास हजार पचपन वर्ष बीत गये।

रमेशचन्द्र—तो पहले कौन बना? मनुष्य पहले बने या सूर्य आदि—

स्वामी जी—ईश्वर बड़ा दयावान है। उसका सब काम नियम से होता है। उसने पहले सूर्य चन्द्र,

पृथ्वी आदि बनाये। उनको 'बसु' कहते हैं क्योंकि इन पर प्राणी बसते हैं। जब बसने का स्थान बन गया तो उनके खाने के लिये घास, वृक्ष, फूल, फल आदि बनाए। इसके बाद कीड़े मकोड़े, जलचर, थलचर, नभचर, पशु पक्षी उत्पन्न हुये। इसके बाद गाय, बैल, घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली आदि उत्पन्न हुये।

ज्ञानचन्द्र--मनुष्य कब बना ?

स्वामी जी--ईश्वर की सृष्टि में मनुष्य जाति सबसे उत्तम मानी जाती है। जब सब चीज़ बन गई तब इसको बनाया गया। इसलिये हम लोगों को चाहिये कि परमात्मा को बहुत ही धन्यवाद दें।

शिवदत्त—सब मनुष्य एक ही बुद्धि के थे या उनकी बुद्धि अलग अलग थी ?

स्वामी जी--सब मनुष्य समान बुद्धि वाले नहीं थे। कुछ महान् आत्मा थे, कुछ विद्वान थे, कुछ साधारण बुद्धि के। कुछ ऐसे भी थे जिनमें इतनी बुद्धि भी न थी कि साधारण बात को भी समझ सकते। ईश्वर ने यह काम भी मनमाना नहीं किया था ? पहले कल्प में जैसे जैसे कर्म किये थे उसी के अनुसार उनकी बुद्धि भी बनी। सृष्टि के आरम्भ में चार ऐसी महान् आत्माओं ने जन्म लिया जो सबसे श्रेष्ठ, विद्वान्, और धर्मात्मा थे। इनके नाम याद कर लो--अग्नि, वायु, आदित्य और

अंगिरा। ईश्वर ने जगत् के कल्याण के लिये इनको छाँट लिया और उनको वेदों का ज्ञान दिया।

रामचन्द्र—मैंने सुना है कि वेद चार होते हैं।

स्वामी जी—हाँ, चार वेद हैं। अग्नि ऋषि ने ऋग्वेद के द्वारा लोगों को पदार्थों का ज्ञान दिया। आदित्य ऋषि ने सामवेद के मंत्रों को संगीत शास्त्र के अनुसार स्वर सहित गा गाकर लोगों को ईश्वर की उपासना सिखाई। वायु ने यजुर्वेद के द्वारा यज्ञ करना और पदार्थों को बनाना सिखाया और अंगिरा ऋषि ने अथर्ववेद के द्वारा सामूहिक रूप से वैदिक सभ्यता का ज्ञान कराया। इन्हीं की शिक्षा का फल था कि लोगों ने जमीन को जोता, खेती की। घोड़ा गाय और कुत्ते को पालतू बनाकर अपना काम निकाला। पशुओं से दूध की प्राप्ति की। घोड़ों पर सवारी की शिक्षा दी गई। बैलों और घोड़ों को रथों में जोता गया। उनसे खेती का काम लिया।

ज्ञानचन्द्र—स्वामी जी! मनुष्यों को भी शिक्षा दी गई होगी।

स्वामी जी—हाँ, मनुष्यों को भी शिक्षा दी गई—हम कह चुके हैं कि सृष्टि के आरम्भ में हर प्रकार के लोग उत्पन्न हुये थे। बुरे भी, भले भी, बुद्धिमान् भी, मूर्ख भी, कमजोर भी और बलवान् भी। ऋषियों ने जैसे पशु, पक्षियों को शिक्षा दी। इसी प्रकार मनुष्यों को भी

शिक्षा दी और उनको सभ्य बनाने का यत्न किया। बुरे लोग अच्छे लोगों से लड़ते थे। ऋषि लोग समझा बुझाकर उनको अच्छा बनाने का यत्न किया करते थे। जो अच्छे और बुद्धिमान् लोग थे वे ऋषियों का उपदेश सुनकर विद्वान् और शूरवीर बन जाते थे। जो क्रूर और अधम लोग दूसरों को सताते थे और ऋषियों का उपदेश नहीं सुनते थे उनका दमन करने के लिये यह ऋषि लोग पुरुषों को तैय्यार किया करते थे। लड़ाइयाँ भी होती थीं। इनको सुरासुर संग्राम कहते हैं। इस प्रकार युद्ध विद्या का भी विकास हुआ। उपदेश देने वाले ब्राह्मण कहलाये और वीर योद्धाओं का नाम क्षत्रिय रक्खा गया। ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों मिलकर लोगों को सभ्य बनाने का काम करते थे। ब्राह्मण अपने कोमल उपदेशों से और क्षत्रिय बुरे आदमियों को दण्ड देकर।

रामचन्द्र—अब मेरी समझ में आ गया कि ब्राह्मण और क्षत्रिय कैसे बने ?

स्वामी जी—जिन लोगां ने पशु-पालन और खेती का काम किया, और अपनी पैदा की हुई चीजों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचाया उनका नाम वैश्य पड़ा। इन्होंने खेतों को जोता, गेहूँ, जौ, चना, मसूर, उर्द, मूंग चावल आदि अन्न और आम, सेव, केला आदि अनेक प्रकार के फल पैदा किये। मकान बनाये, गाँवों

और नगरों को बसाया। गाँवों के बीच में सड़कें बनाई। व्यापार को बढ़ाया। खानों को खोद कर सोना, चाँदी, लोहा आदि धातुओं को निकाला और अनेक प्रकार के अस्त्र, शस्त्र, तथा खेती बाड़ी के औजार और रथ गाड़ी आदि बनाये। इस प्रकार वैश्यों के अनेक भाग हो गये। खेती करने वाले किसान, बाग लगाने वाले माली, गाय पालने वाले ग्वाले, बकरी और भेड़ पालने वाले गड़रिये लकड़ी का काम बनाने वाले बढ़ई, लोहे का काम बनाने वाले लुहार, सोने चाँदी के जेवर बनाने वाले सुनार यह सब वैश्य हुये।

जो निर्बुद्धि मनुष्य थे वह ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के काम में शारीरिक सहायता देते थे। इसलिये उनका नाम शूद्र पड़ा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र चारों वर्णों के लोग परस्पर सहायता देकर पूरे समाज को चलाते थे। यह चारों वर्ण गुण, कर्म, और स्वभाव के अनुसार होते थे। जो पुरुष जैसी योग्यता प्राप्त करता था वह उसी वर्ण का माना जाता था। ब्राह्मण का बेटा यदि अयोग्य हो तो नीचे के वर्ण में गिना जाता था। और यदि शूद्र का बेटा गुणवान् हो तो वह ऊँचे वर्ण में मान लिया जाता था। वैदिक काल में आर्य्यों की यही वर्ण व्यवस्था थी। इससे हर एक मनुष्यों को अपनी उन्नति करने के लिये प्रेरणा मिल जाती थी।

चन्द्रकान्त—यह तो भली प्रकार मेरी समझ में आ गया पर यह बताइये कि मनुष्य जाति का आरम्भ किस स्थान में हुआ।

स्वामी जी—आदि काल में जहाँ सबसे पहले मनुष्य जाति उत्पन्न हुई उसको त्रिविष्टप या तिब्बत कहते हैं। यह संसार भर में सबसे ऊँचा स्थान है। यहीं से चल कर आर्य्य लोग पृथ्वी के अन्य भागों में फैले। इनके फैलने में हजारों वर्ष लगे। इन्होंने जंगलों को काटकर साफ किया। खेती बाड़ी का प्रबन्ध किया। मकान बनाये। नगर बसाये, भेड़ की ऊन के कपड़े बनाये। कपास उगाकर उसके सूत को कातकर कपड़ा बनाया। रेशम के कीड़े पालकर उनसे रेशम निकाला। और रेशम के नर्म कपड़े बनाये। इन सबका संकेत वेदों में मिलता है। यह ऋषियों की बुद्धि का चमत्कार है कि उन्होंने वेदों से प्रेरणा प्राप्त की। और उस प्रेरणा के फलस्वरूप बहुत सी नई बातों की खोज की और भिन्न भिन्न प्रकार की चीजें बनाईं। ऐसा करने में सहस्रों वर्ष लग जाना स्वाभाविक है। ऊपर कहा जा चुका है कि सृष्टि की आदि में जो मनुष्य अथवा अन्य प्राणी उत्पन्न हुये उनमें अच्छे बुरे सब प्रकार के लोग थे। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि आदि काल में सभी धर्मात्मा थे। हाँ वह बात ठीक है कि ऋषि लोगों के उपदेशों का प्रभाव पड़ता था। और बहुत से

लोग बुरी बातों को छोड़ कर धर्म पर चलने लगते थे। आदि काल में जब तक मकान बनाने या कपड़ा बुनने का काम प्रचलित नहीं हुआ तब तक लोग खोओं में रहते और नंगे फिरा करते थे। क्योंकि आविष्कारों में देर लगी लेकिन आदि काल के ऋषि नंगे रहते हुये भी असभ्य नहीं थे। वे विद्वान्, धर्मात्मा और ज्ञानी थे। उसी ज्ञान की सहायता से उन्होंने अनेक प्रकार की चीजें बनाई। जो दुष्ट स्वभाव के मनुष्य थे और जिनकी प्रवृत्ति पशुओं जैसी थी उनको सुधारने की भी ऋषियों ने निरन्तर कोशिश की। इस प्रकार आर्य सभ्यता तिब्बत से चलकर धीरे धीरे समस्त भूमण्डल पर फैल गई। पहले उत्तरी भारत में जो देश बसाया गया उसको 'ब्रह्मर्षि देश' कहते थे। पीछे से समस्त देश का नाम जो दो समुद्रों और हिमालय के बीच में आया 'आर्य्यावर्त' पड़ा। इसी को आजकल भारतवर्ष कहते हैं। भारतवर्ष से बाहर जाकर आर्य लोगों ने पश्चिम, उत्तर, पूर्व और दक्षिण की ओर यात्रा कर के वहाँ टापुओं और द्वीप-द्वीपान्तरों को जा बसाया। इन देशों के भिन्न-भिन्न युगों में भिन्न-भिन्न नाम पड़े और इन जातियों के भी भिन्न-भिन्न नाम हो गये। वास्तव में भूमण्डल भर में जितनी जातियाँ हैं वे सब आर्य्य जाति की सन्तान हैं। काल की गति से इनके आचार, व्यवहार, भाषा, भूषा, चाल-चलन आदि में भेद-

पड़ गया। और जलवायु तथा नैतिक अथवा भौगोलिक कारणों से लोगों के सिर, नाक आदि की आकृति भी बदल गई। वस्तुतः चपटी नाक के चीनी, मोटे होंठों वाले काले रंग के हब्शी, पीतवर्ण जापानी और गोरे अँगरेज और फरासीसी यह सब एक ही जाति की सन्तान होने से मूल में आर्य्य थे और अब भी भाई बहन हैं। केवल रहन-सहन और विचारों में भेद पड़ गया है।

ज्ञानचन्द्र—स्वामी जी महाराज! आपने दया करके हमको नई-नई बातें बताई हैं। अब आज देरी हो गई है।

स्वामी जी—हाँ ठीक है। ईश्वर का गुणगान कर आज की कथा समाप्त करता हूँ।

भजन

पिता जी करूँ तुम्हें मैं प्यार।
तुमहीं देव हमारे मन के, तन के तुम आधार॥
फूलों की रज गन्ध तुम्हीं हो, विद्या के आगार।
तरणि तेज के दाता तुम हो, वेदों के सुविचार॥
जीवन दीन हीन के हो तुम, सकल जगत के सार।
सब पापों से तुम्हीं बचाते, करते दया अपार॥
जल थल नभ में वास तुम्हारा, तनमन में संचार।
सत्ता का है 'सत्य' तुम्हारी, कण कण में विस्तार॥

———

दूसरी कथा

वेदों का ह्रास और पुनरोद्धार

दूसरे दिन बड़ी उत्सुकता से भक्त लोग श्री स्वामीजी की कुटिया में पहुँचे। उन्होंने जाकर देखा कि स्वामीजी भजन गा रहे थे। वे सब भी उनके साथ गाने लगे।

भजन

आनन्द सुधासार दया का पिला गया,
भारत को दयानन्द दुबारा जिला गया।
डाला सुधार वारि बढ़ी मल बेल की,
देखो समाज फूल फबीले खिला गया॥
काटे कराल जाल अविद्या अधर्म के,
विद्या वधू को धर्म धनी से मिला गया॥
ऊँचे चढ़े न क्रूर कुचाली गिरा दिये,
यज्ञाधिकार वेद पढ़ों को दिला गया॥
खोली कहाँ न पोल ढके ढोंग ढोल की,
संसार के कुपंथ मतों को हिला गया॥
शंकर दिया बुझाय दिवाली को देह का,
कैवल्य के विशाल वदन में समा गया॥

स्वामी जी—कल मैंने बताया था कि संसार में ज्ञान किस प्रकार फैला—वेदों का ज्ञान किस प्रकार हुआ। यह ज्ञान की धारा किस प्रकार बही। उसी पर आज और बताऊँगा। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्व वेद आर्य्यों के मुख्य धर्मशास्त्र हैं। यह ईश्वर द्वारा प्रकाशित माने जाते हैं। उन आदि ऋषियों को पढ़ाने वाला और कोई गुरु न था। इसलिये उनके आत्मा में जो ज्ञान का प्रकाश हुआ वह ईश्वर के द्वारा ही प्रकाशित हुआ। ऐसा हमारे सभी पवित्र ग्रन्थों में लिखा है। वेदों के पश्चात् आर्य्य विद्वानों और ऋषि महर्षियों ने कम ज्ञान वाले लोगों के लिये वेद की व्याख्या के रूप में अन्य ग्रन्थों की रचना की। इनमें से लाखों ग्रन्थों का लोप हो गया। परन्तु वेद मूल ग्रन्थ थे अतः उनकी रक्षा की गई। जैसे हर साल वृक्ष में हजारों पत्ते और डालियाँ निकल कर सूख जाती हैं परन्तु मूल बना रहता है। इसी प्रकार वेदों को लोगों ने कण्ठ कर लिया और उनकी रक्षा की। शेष ग्रन्थ समय-समय पर बनते और लुप्त होते रहे। आजकल जो पुराने ग्रन्थ पाये जाते हैं वे ये हैं:—

(१) ऐतरेय, साम, शतपथ और गोपथ चार ब्राह्मण ग्रन्थ।

(२) कल्पसूत्र और गृह्य सूत्र।

(३) मनुस्मृति।

(४) पाणिनि मुनि का व्याकरण जिसको अष्टाध्यायी कहते हैं।

(५) यास्क मुनि का निरुक्त जिसमें वेदों के अर्थों पर विचार है।

(६) छः दर्शन अर्थात् गौतम मुनि का न्याय, कणाद मुनि का वैशेषिक, कपिल मुनि का सांख्य, पतंजलि मुनि का योग, जैमिनि मुनि का पूर्व मीमांसा, व्यास मुनि का उत्तर मीमांसा जिसको वेदान्त दर्शन भी कहते हैं।

(७) ग्यारह उपनिषदें—ईशोपनिषद्, कठोपनिषद्, केनोपनिषद्, ऐतरेय उपनिषद्, तैत्तरीय उपनिषद्, मुण्डक उपनिषद्, माण्डूक्य उपनिषद्, छान्दोग्य उपनिषद्, बृहदारण्यक उपनिषद्, श्वेताश्वतर उपनिषद्।

(८) रामायण और महाभारत दो बड़े इतिहास।

(९) कतिपय अन्य ग्रन्थ।

इन ग्रन्थों का पूर्ण शुद्ध रूप पाया नहीं जाता। लोगों ने बीच बीच में स्वार्थ या अज्ञानवश मिलावट कर दी है। जैसे छन्ने से छान कर जल का मैल दूर कर देते हैं इसी प्रकार बुद्धि से सोच विचार कर इन ग्रन्थों को पढ़ना चाहिये। जो वेद के अनुकूल है वह सत्य है। जो वेद के विरुद्ध है वह झूठ है।

ज्ञानचन्द्र—पर कुछ दिन बाद वेदों के ज्ञान का लोप हो गया और भिन्न भिन्न सम्प्रदाय भारत में पैदा हो गये।

स्वामीजी—समय बीतने पर ऐसा हो ही जाया करता है। लोग सच्चे धर्म को छोड़कर इधर उधर भटक जाते हैं। जब ऋषि मुनि कम हो गये और वैदिक धर्म की गिरावट हुई तो भारतवर्ष के भीतर और बाहर अनेक प्रकार के मतमतान्तर उठ खड़े हुये। चतुर लोगों ने अपने को पैगम्बर, पीर और महन्त प्रसिद्ध किया और अपने नाम पर अलग अलग मत बना डाले। भारतवर्ष के भीतर भी कई नास्तिक मत प्रकट हुये जो वेदों को नहीं मानते थे। वेद के मानने वालों ने भी वेद के नाम पर अत्याचार किये, यज्ञों में पशुओं की बली दी जाने लगी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र गुण कर्म स्वभाव के स्थान में जन्म से माने जाने लगे। आर्य लोग छोटी छोटी सैकड़ों जातियों में विभक्त हो गये। सैकड़ों प्रकार के ब्राह्मण, सैकड़ों प्रकार के क्षत्रिय, सैकड़ों प्रकार के वैश्य और शूद्रों की सैकड़ों जातियाँ बन गईं। इससे आर्य जाति का संगठन टूट गया। वैर भाव और ईर्ष्या द्वेष फैल गया। महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म स्थापित किया और महात्मा महावीर ने जैन धर्म। यह वेदों को नहीं मानते थे। भारतवर्ष के बाहर जरथुस्थ ने पारसी धर्म, ईसा ने ईसाई धर्म और मुहम्मद ने मुसल्मानी धर्म स्थापित किया। मुसल्मान और ईसाई लोग भारतवर्ष में भी आ धमके और यहाँ के निवासी आर्य्यों को जिनका नाम बहुत दिनों

से हिन्दू पड़ गया है मुसल्मान और ईसाई बनाने लगे। इससे वैदिक धर्म के रहे सहे चिह्न भी मिटने लगे। मांस और शराब का प्रचार बढ़ा। लोगों ने ऋषि मुनियों के धर्म को छोड़ दिया। पहले तुर्कों, फिर मुग़लों और पीछे से अंगरेजों ने भारतवर्ष को ले लिया और लगभग एक हज़ार वर्ष तक यह देश विदेशियों का दास रहा।

शिवदत्त---शोक! महाशोक! एक हज़ार वर्ष की गुलामी ने हमारा सत्यानाश कर दिया।

स्वामी जी—भगवान् की दया से एक महान् आत्मा हमारे देश में उत्पन्न हुई। उसने हमको सोते से जगाया। हमको बताया कि हम क्या थे और क्या हो गये। हमारा पवित्र वैदिक धर्म क्या था? ऋषि की वाणी ने सोती हुई आर्य्य जाति को फिर से जगा दिया। उनकी संक्षेप जीवन कथा इस प्रकार है---

सम्वत् १८८१ विक्रमी अर्थात् १८२४ ईसवी में गुजरात के टङ्कारा नगर में स्वामी दयानन्द का जन्म हुआ। इनको १४ वर्ष की आयु में ज्ञान हो गया। यह कथा इस प्रकार है। स्वामी दयानन्द के पिता कर्सन जी (कृष्ण जी) शिवरात्रि का व्रत रक्खा करते थे। स्वामी दयानन्द का बचपन का नाम मूल शंकर था। जब यह चौदह साल के थे अपने पिता के आदेशानुसार इन्होंने शिवरात्रि का व्रत रक्खा। इनको बताया गया था कि आधीरात को शिवजी

महाराज कैलाशपति स्वयं भक्तों को दर्शन देते हैं। मूलशंकर जागते रहे। सब लोग मन्दिर में सो गये, रात को एक चूहा बिल में से निकला और शिवजी की मूर्ति पर से चढ़ावा खाकर भाग गया। मूलशंकर ने सोचा कि यह पत्थर की मूर्ति शिव नहीं है। असली शिव कोई और है जो संसार को बनाता, पालता और नाश करता है। उस दिन से इन्होंने सच्चे शिव की तलाश की। मूर्तिपूजा छोड़ दी। घर से निकल कर संन्यास ले लिया और दयानन्द सरस्वती अपना नाम रक्खा। स्वामी दयानन्द ने मथुरा में एक दण्डी स्वामी विरजानन्द जी से जो अन्धे थे। व्याकरण और अन्य शास्त्र पढ़े।

शिवदत्त—क्या? स्वामी विरजानन्द से शिक्षा प्राप्त की? क्या वह समाखे नहीं थे?

स्वामी जी—हाँ! स्वामी विरजानन्द जी ज्ञान के सूर्य थे। उनकी बाहरी आँखें बीमारी में नष्ट हो गई थीं। पर उनकी अन्दर की आँख खुली थी। उन्होंने ऋषि दयानन्द को प्रेरणा की कि 'तुम वैदिक धर्म का प्रचार करो' और वे अपने गुरु के आदेशानुसार वैदिक धर्म का प्रचार करने लगे। स्वामी दयानन्द ने वेदों से सिद्ध किया कि मूर्तिपूजा पाप है। एक ईश्वर की उपासना करनी चाहिये। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र गुण कर्म स्वभाव के अनुसार मानने चाहिये। यज्ञों में बलि नहीं देनी चाहिये। सभी देशों में

और सभी मतों या जातियों के लोग वैदिक धर्म ग्रहण कर सकते हैं। जाति पाँति के भेद भाव को छोड़ देना चाहिये।

ज्ञानचन्द्र—धन्य है ऋषिवर ! कितना सच्चा मार्ग सिखाया ?

स्वामी जी—ऋषि दयानन्द ने जीवन भर व्याख्यान दिये, शास्त्रार्थ किये, हज़ारों उनके भक्त हो गये। सिद्धान्तों का प्रचार करने के लिये उन्होंने ये पुस्तकें लिखीं।

(१) सत्यार्थ प्रकाश।

(२) संस्कार विधि।

(३) ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका।

(४) वेद भाष्य।

(५) गोकरुणानिधि।

(६) आर्याभिविनय आदि आदि

इन सब में सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ धर्म का सार है। इसको पढ़ने से स्वामी जी के सिद्धान्तों का भली भांति ज्ञान हो जाता है।

रामचन्द्र—स्वामी जी ! मैं इन पुस्तकों को अवश्य पढ़ूंगा। आर्य समाज मंदिर में जाकर इनको ख़रीद लूँगा। धन्य है ऋषि दयानन्द !

स्वामी जी—ऋषि दयानन्द ने इतना ही नहीं किया। वे सोचने लगे कि वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिये

एक समाज की आवश्यकता है। यह ध्यान आते ही उन्होंने १८७५ ई० में "आर्य समाज" की स्थापना बम्बई में की। इसके बाद उनके समय में ही सैकड़ों आर्य समाज खुल गये। अब तो इनकी संख्या ३००० से भी अधिक है।

रामचन्द्र—"आर्य समाज" से क्या मतलब है?

स्वामी जी—"आर्य" कहते हैं श्रेष्ठ को, "समाज" का अर्थ है सभा! ऐसा स्थान जहाँ श्रेष्ठ, भक्त, धर्मात्मा बैठकर ईश्वर का भजन करें और दूसरों के उपकार की बातें सोचें। इस समाज के स्वामी जी ने ये दस नियम बनाये :—

(१) सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

(२) ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है—उसी की उपासना करनी योग्य है।

(३) वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना, पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्य्यों का परम धर्म है।

(४) सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

(५) सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार कर करना चाहिये।

(६) संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है। अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

(७) सब से प्रीति पूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य बर्तना चाहिये।

(८) अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

(९) प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

(१०) सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी, नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये। और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

शिवदत्त—ऐसे कल्याणकारी धर्मात्मा का हम सब को गुणगान करना चाहिये।

स्वामी जी—हाँ, हाँ, हम सब लोग गावें।

देखो तो स्वामि कैसा उपकार कर गया है।
भारत निवासियों को बेदार कर गया है॥

बेहोश बेखबर हम, सोये पड़े हुये थे।
सबको जगा-जगाकर होशियार कर गया है॥
भारत की दुर्दशा में कोई कसर नहीं थी।
करके समाजें कायम शुभ कार्य कर गया है॥
वेदों का नाम तक भी जाने नहीं था कोई।
वह हर जगह पर उनका प्रचार कर गया है॥
वेदों का भाष्य करके विद्या व योग बल से।
सच्चे धरम का जाहिर असरार कर गया है॥
संस्कृत व मातृ-भाषा, जो हो चुकी थी मुर्दा।
इसको पुनः जिला कर जांदार कर गया है॥
हिन्दू गुलाम काफिर जो हो गये थे आर्य।
आर्य बना फिर उनको सर्दार कर गया है॥
मत और मतान्तरों की दीवार और किलों को।
युक्ति के फावड़ों से मिसमार कर गया है॥
गुरुकुल का वह तरीका बतला के आर्यों को।
ब्रह्मचर्य आश्रम का उद्धार कर गया है॥
होने न पावें कोई ईसाई और मुसलमां।
यों आर्यों की सेना तैयार कर गया है॥
लाखों यतीम बच्चे जिनका नहीं था कोई।
सब आर्यों को उनका रक्षक बना गया है॥
मानें न मानें कोई पर सच तो यह है 'सालिग'।
बाग़े धरम को स्वामी गुलजार कर गया है॥

———

तीसरी कथा

ईश्वर विचार

तीसरे दिन कथा होने को थी। भक्त पहले से ही जमा हो गये थे। उनमें से दो प्रेम से गा रहे थे "आनन्द सुधासार दया का पिला गया, भारत को दयानन्द दुबारा जिला गया"। प्रेम मंडली धीरे धीरे बढ़ने लगी। स्वामी जी के आते ही सबके सब खड़े हो गये और प्रेम से गाने लगे :—

भजन

हे प्रेममय प्रभो तुम्हीं सब के अधार हो।
तुमको परम पिता प्रणाम बार बार हो॥ १॥
ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्मवीर हों।
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो॥ २॥
सन्देश देश देश में वेदों का दें सुना।
सम भाव और प्रेम का सब में प्रसार हो॥ ३॥
असहाय के सहाय हों उपकार हम करें।
अभिमान से बचें हृदय निर्भय उदार हो॥ ४॥
फूले-फले संसार की यह रम्य वाटिका।
कर्त्तव्य का अपने सदा हमको विचार हो॥ ५॥

स्वाधीनता के मंत्र का जप हम सदा करें।
सेवा में मातृभूमि के तन मन निसार हो॥ ६ ॥

स्वामी जी—आज का भजन कितना सुन्दर है। 'प्रभो सबके अधार हो'। आज उसी मंगलमय भगवान् के गुणों पर हम विचार करेंगे। सृष्टि को देखने से पता चलता है कि यह बड़ी अद्भुत, विचित्र और सुख देने वाली सृष्टि है, ऐसी सृष्टि का बनाने वाला भी बड़ा अद्भुत, विचारवान्, दयालु और ज्ञानी होना चाहिये। दूर क्यों जाइये। अपने शरीर से ही आरंभ कीजिये। हमारे शरीर में आँखें, कान, नाक, मुँह, खाल आदि कैसी विचित्र चीजें हैं। हम आँख से देखते हैं, कान से सुनते हैं, नाक से सूंघते हैं। खाल से कोमल, कठोर, ठंडा, गरम जानते हैं। जीभ से मीठा, कड़वा, खट्टा, कसैला चखते हैं। आँख, कान, नाक, त्वचा और जीभ का नाम देव भी है और इन्द्रिय भी। इनको 'देव' इसलिये कहा कि इनके द्वारा हमको ज्ञान मिलता है। इनको 'इन्द्रिय' इसलिये कहते हैं कि जीव का नाम "इन्द्र" है। आँख कान आदि जीव के ज्ञान प्राप्त करने के साधन हैं, इन सबका बनाने वाला महादेव, देवों का देव, परमदेव है। उसी को महेश्वर या परमेश्वर भी कहते हैं।

आँख, कान, आदि हमारे हैं परन्तु हमने इनको बनाया नहीं। हम में आँख, कान, नाक आदि बनाने का

न ज्ञान है न शक्ति। जैसे मनुष्य के नाक कान आदि हैं उसी प्रकार कुत्ते, बिल्ली, चूहा, चींटी आदि के भी तो आँख, कान, नाक आदि हैं। जैसे पशु पक्षी अपनी इन्द्रियों के बनाने में असमर्थ हैं इसी प्रकार मनुष्य भी अपनी इन्द्रियों को बना नहीं सकता। माता के पेट से जब बच्चा पैदा होता है तो उसके नाक, कान, आँखें सभी होती हैं। भैंस के बच्चे के भी, और कुत्ते, बिल्ली या सुअर के बच्चे के भी। बच्चे की माता को तो आँख बनाने का ज्ञान नहीं। वह तो खिलौना भी नहीं बना सकती। ऐसी उत्तम आँखें बनाना तो उसके लिये सर्वथा असंभव है।

यह सुन्दर इन्द्रियां किसने बनाईं? ईश्वर ने। ईश्वर कैसा है? परम ज्ञानी, बड़ा शक्ति वाला। तभी तो उसने ऐसा अच्छा शरीर बनाया। यदि ईश्वर आँख, कान न देता तो हम कैसे देखते? कैसे चलते फिरते? कैसे खाते पीते? कैसे आनन्द करते? क्या कभी तुमने अपनी सूरत देखी है? शीशे में देखो। आँख की पुतली कितनी साफ है और कितनी सुन्दर। फिर उसकी रक्षा के लिये पलक हैं। अगर आँख होती और पलक न होते तो आँख में धूल चली जाती। जब कोई कीड़ा आँख पर आक्रमण करता है तो पलक झट से बन्द हो जाते हैं। ईश्वर जानता है कि आँख पर अगर पलक न हों तो आँख पर आफत आ सकती है।

इसलिये ईश्वर ने पलक बनाये। फिर एक और बात सोचो। अगर आँख हो और सूरज न हो तो क्या आँख देख सकती है? कुछ नहीं देख सकती। अंधेर में तो आँख को काला, पीला, लम्बा, छोटा भी दिखाई नहीं देता। इसलिये ईश्वर ने आँख की सहायता के लिये ही सूरज बनाया। सूरज सब आँखों की आँख है। हमारी सबकी अपनी अपनी आँख हैं। मेरी अलग, आपकी अलग, पशु पक्षियों की अलग। परन्तु इन सब आँखों की मदद के लिये सूर्य तो एक ही है। वही एक सूरज भारतवर्ष के लिये भी, लंका के लिये भी, ब्रह्मदेश के लिये भी। सोचो तो सही कि वह ईश्वर कैसा महान् है जो छोटी से छोटी चींटी की आँख को भी बनाता है और इतने बड़े सूरज को भी बनाता है जिससे हम सब की आँखों को रोशनी मिलती है।

ऐसे दयालु ईश्वर का ध्यान तो सभी को करना चाहिये। कोई हमको कोई अच्छी चीज दे तो हम उसका उपकार मानते हैं। आप कुत्ते को रोटी का टुकड़ा डाल दीजिये, वह धन्यवाद देता हुआ पूँछ हिलायेगा, आपसे प्रेम करेगा और आपके साथ साथ फिरेगा। जब कुत्ता भी इतनी बात समझता है तो हम सबको तो ईश्वर का बहुत बड़ा उपकार मानना चाहिये जिसने रोशनी के लिये सूरज, सूंघने के लिये हवा, पीने के लिये पानी और खाने के लिये अनेक प्रकार के फल फूल अन्न आदि उगाये।

रामपदार्थ—स्वामी जी! यह तो हमारी समझ में आ गया कि सृष्टि को बनाने वाला बड़ा प्रतिभाशाली, महाज्ञानी, महाशक्तिशाली व श्रेष्ठ है। पर ईश्वर हमको दिखाई तो नहीं देता। वह कैसा है? कहाँ रहता है? इस पर हमको उपदेश देने की कृपा करें।

स्वामी जी—इतना तो तुम मान गये। वह हमको दिखाई नहीं पड़ता। ईश्वर निराकार है। उसका कोई आकार नहीं। वह नीला नहीं, पीला नहीं, काला नहीं, सफेद नहीं, मोटा नहीं, पतला नहीं। आकार वाली चीज आँखों से मोटी होगी तभी तो आँखें उसको देख सकेंगी। साकार चीजें सब स्थूल होती हैं। उनके सिरे होते हैं, हर आकार वाली चीज के सिरे हैं। कुरसी, मेज, मकान, पहाड़, नदी सब की हद है। ईश्वर अनन्त है। वह सब से बड़ा और सब जगह व्यापक है। इसलिये वह निराकार है। जो लोग ईश्वर को साकार और मूर्तिमान समझ कर उसको देखने की कोशिश में लगे हैं वह मूर्ख हैं और अपने को धोखे में डालते हैं। ईश्वर न कभी किसी को हाड़ मांस की बनी आँखों से दीखा है न दीखेगा। ईश्वर को तो ज्ञान की आँखों से ही देखा जा सकता है।

"आँख कान मुँह मूँद कर नाम निरञ्जन ले।
भीतर के पट जब खुलें, बाहर के पट दे॥"

इसलिये ईश्वर की महान् सृष्टि पर विचार करके ही ईश्वर का अनुमान हो सकता है।

याद रक्खो कि ईश्वर न साकार है, न आकार ही ले सकता है। न उसको आकार लेने की जरूरत है। ईश्वर अवतार नहीं लेता। ईश्वर अजन्मा है, न जन्म ले, न मरे। उसको जन्म मरण के बन्धन में आने की ज़रूरत नहीं। वह एक रस और निर्विकार है। इसलिये वेदों में कहा है :—

* सपर्य्यगात् = वह सर्व व्यापक है।

शुक्रम् = प्रकाशवान् है।

अकायम् = निराकार, शरीर रहित है।

अस्नाविरम् = नाड़ी नस के बन्धन से बाहर है।

शुद्धम् = शुद्ध है।

अपापविद्धम् = पाप से दूर है।

शिवदत्त—यह तो मेरी समझ में आगया कि ईश्वर निराकार है। पर मेरी समझ में यह नहीं आया कि वह अवतार क्यों नहीं लेता? इतने अवतार माने जाते हैं क्या वे झूँठे हैं? ईश्वर सर्वशक्तिमान ठहरा, जहाँ वह इतने बड़े-बड़े काम करता है वहाँ अवतार भी क्यों नहीं ले लेता।

---

* स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम्।
(यजुर्वेद अध्याय ४०, मन्त्र ८)

स्वामी जी—ध्यान से विचार करो, तुम्हारी समझ में आ जावेगा। अवतार के बारे में ये तीन बातें याद रक्खो :—

ईश्वर अवतार नहीं लेता—पहली बात।

ईश्वर अवतार नहीं ले सकता—दूसरी बात।

ईश्वर को अवतार की ज़रूरत नहीं—तीसरी बात।

अवतार लेने का अर्थ है कहीं से नीचे उतरना! लोगों ने अज्ञान से यह मान लिया है कि आसमान के ऊपर बहिश्त है। ईश्वर वहीं रहता है और जब दुनियाँ को ज़रूरत होती है तब वह किसी न किसी रूप में नीचे उतर आता है। श्री रामचन्द्र, श्रीकृष्ण आदि कई महापुरुषों को लोगों ने भूल से ईश्वर का अवतार कहना आरम्भ कर दिया। यह अविद्या की बात संसार में एक बार फैल गई। कई पशुओं को भी ईश्वर का अवतार कहा जाने लगा। जैसे मच्छ अवतार, कच्छ अवतार, वाराह यानी सुअर का अवतार! और इनके विषय में कपोल कल्पित कहानियाँ गढ़ ली गई। किसी ने कहा कि रावण को मारने के लिये राम ने अवतार लिया। किसी ने कहा कंस के मारने के लिये कृष्ण ने अवतार लिया। किसी ने कहा, पृथ्वी को निकालने के लिये शूकर का अवतार हुआ। किसीने यह नहीं सोचा कि सर्व व्यापक ईश्वर तो सब जगह है। वह तो आकाश में भी है और ज़मीन पर भी है। अगर ज़मीन

पर न होता तो आसमान से उतरता, वह तो नित्य हर घड़ी सृष्टि बनाता रहता है। मूर्ख लोग समझते हैं कि रावण कंस आदि को मारने के लिये बड़ी शक्ति चाहिये। मनुष्य में ऐसी शक्ति कहाँ जो इनको मार सके। वह भूल जाते हैं कि यह थे तो सब मनुष्य ही। मनुष्य में एक से एक बढ़कर हो सकता है। ईश्वर के सामने तो कंस, रावण किसी की शक्ति बड़ी नहीं है। जिसने सूरज, चाँद बनाये समुद्र और पहाड़ बनाये, शेर चीते बनाये, कंस और रावण को भी बनाया उनको मारना ईश्वर के लिये कौन बड़ी बात है। बड़े भयानक शेर रोज मरते रहते हैं। जब इनकी मौत आती है तो क्षण भर में टें हो जाते हैं, क्या ईश्वर इनको तलवार बन्दूक लेकर मारने आता है। रावण को राम ने तीर से मारा, कंस को कृष्ण ने पछाड़ कर गिराया। राम और कृष्ण वीर महापुरुष थे। उन्होंने रावण कंस दुष्टों को मार गिराया। यह क्षत्रियों का काम है। राम और कृष्ण प्रतापी क्षत्रिय थे। यदि ईश्वर होते तो रावण और कंस के शरीरों में भी व्यापक होते और एक क्षण में भीतर से ही उनकी जान ले लेते। न लड़ाई की जरूरत थी न हथियार चलाने की।

हिन्दुओं की देखा देखी ईसाइयों ने भी एक अवतार की कहानी गढ़ ली कि ईसा खुदा का अवतार या खुदा का बेटा था। जैसे राम और कृष्ण का अवतार होना गलत

है ऐसा ही ईसा का भी अवतार होना गलत ही है।

बहुत से लोगों ने अपना मत चलाने और रोजी कमाने के लिये अवतारों की बात गढ़ ली और उनकी मूर्तियाँ मन्दिरों में रखकर उनको पुजवाने लगे। इससे संसार में भेड़ चाल बढ़ गई। पुजावा और रुपया पैसा आने लगा पुजारियों की जीविका चली साधारण लोगों में अन्ध विश्वास बढ़ गया। इससे मत मतान्तर भी बढ़ गये। बुद्धिमान लोगों को चाहिये कि ऐसी बातों को छोड़ें।

लोग कह दिया करते हैं कि ईश्वर सर्वशक्तिमान है। वह सब कुछ कर सकता है। अवतार भी ले सकता है। अनेक रूप भी धारण कर सकता है। लोग अज्ञानवश यह समझते हैं रूप धारण करना या अवतार लेना कोई बड़ी तारीफ की बात है। जैसे कोई कहे कि मेरा बाप तो बड़ा ताकतवर है। वह गधा भी बन सकता है। या मेरा गुरू बड़ा होशियार है। वह झूठ भी बोल सकता है और चोरी भी कर सकता है। भोले भाइयो सोचो! यह जीव की कमजोरी है कि उसको पुरुष, स्त्री, पशु-पक्षी की योनि में आना पड़ता है। और अपने काम करने के लिये तीर तलवार या बन्दूक का सहारा लेना पड़ता है। आप इसको बड़प्पन समझते हैं। यदि राजा कमजोर न होता तो उसे सेना की सहायता की जरूरत न पड़ती। आप कमजोरी को ताकत, और छुटपन को बड़प्पन समझकर

ईश्वर को भी ऐसा ही समझने लगे। ईश्वर के लिये ऐसा कहना उसका अनादर करना है।

अवतार मानने से एक बड़ी हानि यह हुई है कि लोगों ने इन्हीं की मूर्तियों की पूजा आरम्भ कर दी और ईश्वर की पूजा को भूल गये। उन्होंने ईश्वर को जानने की कोशिश ही नहीं की। सारी आयु घंटा घड़ियाल पीटने में ही लगे रहे। इससे असली उपासना की रीति भी छूट गई। जब तक अज्ञान रहेगा लोग इसी प्रकार ईश्वर-विमुख रहेंगे और धोखे में समझते रहेंगे कि हम ईश्वर को पूजते हैं।

संसार में सब से बुरी चीज अविद्या है। अविद्या में फँस कर लोग जड़ पदार्थों को ईश्वर समझ बैठते हैं। अगर मैं किसी वृक्ष के ठूँठ को गुरु समझ लूँ और नित्य उठ कर उसको प्रणाम किया करूँ तो वह ठूंठ मुझे विद्या तो न पढ़ा सकेगा। इसी प्रकार यदि मैं अज्ञान से किसी पत्थर की मूर्ति को ईश्वर या देवता मान लूँ तो वह मुझे कुछ ज्ञान नहीं दे सकता। जो मूर्ति पूजा में लगे रहते हैं उनसे यह अज्ञान मरण पर्यन्त भी नहीं छूटता।

ज्ञानचन्द्र—ईश्वर की उपासना किस प्रकार करें?

स्वामी जी—पहली बात तो यह है कि ईश्वर की उपासना का अर्थ क्या है और प्रयोजन क्या है? कुछ लोग समझते हैं कि ईश्वर को भोग लगाना और उसको

कपड़े पहनाना, रात को सुला देना, प्रातःकाल जगाना, रात को मन्दिर में दातौन रख देना यह ईश्वर पूजा है। यह बड़ी भूल है। ईश्वर तो संसार को खिलाता है। वह भूखा नहीं, प्यासा नहीं, उसे सर्दी नहीं लगती न गरमी लगती है। ऐसे ईश्वर को न कोई खिला सकता है, न पहना सकता है। लोग अपने को धोखा देते हैं जो कहते हैं कि हम ईश्वर को भोग लगा रहे हैं, सच्ची बात तो यह है कि भोग पुजारी लोग उड़ाते हैं। और तुम उन्हीं की पूजा करते हो ईश्वर की नहीं। किसी उपासक ने ठीक कहा है :—

भजन

अजब हैरान हूँ भगवन् तुम्हें क्यों कर रिझाऊँ मैं।
नहीं वस्तु कोई ऐसी जिसे सेवा में लाऊँ मैं॥
करूँ किस तरह आवाहन कि तुम मौजूद हो हरजा।
निरादर है बुलाने का अगर घण्टी बजाऊँ मैं॥
लगाना भोग कुछ तुमको ये एक अपमान करना है।
खिलाता है जो सब जग को उसे कैसे खिलाऊँ मैं॥
तुम्हारी ज्योति से रोशन है सूरज, चाँद और तारे।
महा अंधेर है तुमको अगर दीपक दिखाऊँ मैं॥
भुजायें हैं, न गरदन है, न सीना है न पेशानी।
तू है निरलेप नारायण कहाँ चन्दन लगाऊँ मैं॥
तुम्हीं व्यापक हो फूलों में तुम्हीं हो मूरती में भी।
भला भगवान् पै भगवान् को कैसे चढ़ाऊँ मैं॥

रामचन्द्र—हमारी समझ में भली प्रकार आ गया कि ईश्वर के क्या गुण हैं। अब कृपा करके हमें बताइये कि उपासना करने की क्या आवश्यकता है? इससे हम सब का किस प्रकार कल्याण होगा?

स्वामी जी—ईश्वर की पूजा करने का आशय यह है कि हम ईश्वर की सत्ता और महत्ता का भान समस्त जगत् में कर सकें। हमको ऐसा ज्ञान हो जाय कि ईश्वर सभी चीजों और सब जगहों में है। कण कण में उसकी सत्ता है। वह हमारे दिल के भीतर भी है इसलिये उसका नाम अन्तर्यामी है। ईश्वर की सृष्टि की ओर देखो। अपने शरीर की बनावट की ओर देखो। तुमको हर वक्त याद रहेगा कि ईश्वर की कारीगरी का प्रकाश हर चीज में मौजूद है। थोड़े दिनों तक ऐसी विचारशक्ति के बढ़ने से मनुष्य में ज्ञान उत्पन्न हो जाता है। उसे कोई चीज ईश्वर से खाली दिखाई नहीं देती। उससे उसके चाल-चलन पर विशेष प्रभाव पड़ता है। वह किसी से भय नहीं करता। क्योंकि वह ईश्वर को सदा अपने साथ समझता है। झूठ नहीं बोलता क्योंकि ईश्वर उसके दिल में है। उसके देखते झूठ कैसे बोला जाय! वह चोरी नहीं करता क्योंकि ईश्वर उसे देखता है। यदि कभी उससे कोई पाप हो जाता है। तो वह चुपचाप ईश्वर से क्षमा मांगता है और आगे को प्रतिज्ञा करता है कि मैं अब कभी ऐसा पाप नहीं

करूँगा। देखो जो पूजा के लिये मन्दिरों में जाते और मूर्तियों को देवता समझते हैं वह मूर्तियों के सामने रहते हुये भी पाप करते हैं। यात्रियों को धोखा देते हैं। मूर्तियों की शकल बदल देते हैं और घोषणा करते फिरते हैं कि देवी रंग बदलती है। चोर देवताओं के जेवर चुराकर ले जाते हैं। स्वयं पुजारी लोग भी मन्दिरों में स्त्रियों का सतीत्व भ्रष्ट करते पाये जाते हैं। कई पुजारी कृष्ण का रूप बनाकर स्त्रियों को ठगते और कृष्ण जैसे महात्मा का नाम बदनाम करते हैं। जो ईश्वर की उपासना करेगा उसका चाल-चालन तो उत्तरोत्तर अच्छा होता जायगा। इसलिये ईश्वर की उपासना की ठीक विधि यह है कि—

(१) सृष्टि की रचना और अपने शरीर की रचना को देखकर समझो कि ईश्वर महाज्ञानी, महा बलवान और सबके घट घट का वासी है।

(२) उसको हर जगह समझ कर पाप करने से बचो।

(३) अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य आदि का पालन करो किसी प्राणी को न सताओ न धोखा दो।

(४) कभी चुपचाप एकान्त में बैठकर ईश्वर के गुण कर्म और स्वभाव का ध्यान किया करो। मनन करने से आत्मा की शक्ति बढ़ती है।

(५) * नित्य प्रातःकाल और सायंकाल 'ओ३म्' नाम का जप करो और 'ओ३म्' के अर्थों पर विचार करो।

भजन

दो घड़ी भगवान् का ले नाम तू।
छोड़ कर दुनिया के सारे काम तू॥ १॥
दो घड़ी का ध्यान भी रंग लायगा।
दे समय थोड़ा सुबह और शाम तू॥ २॥
अपने दिल को थाम कर आसन जमा।
मन की चंचलता को प्यारे थाम तू॥ ३॥
त्याग कर आलस को जा सत्संग में।
प्रेमरस का भक्तवर पी जाम तू॥ ४॥
देख तेरे काम को है बात यह।
पायगा दुनिया में फिर आराम तू॥ ५॥

नोट—जब अधिक उन्नति हो जाय तो संध्या की विधि सीख कर दोनों समय संध्या करनी चाहिये।

(देखो स्वामी दयानन्द जी की बनाई पंच महायज्ञ विधि)

चौथी कथा

जीव विचार

आज कथा का चौथा दिन है। आज कल से भी अधिक भीड़ है। भक्तों में धर्म की प्यास उत्पन्न हो गई है। दो भक्त 'अजब हैरान हूँ भगवन' गा रहे हैं।

स्वामी जी के आते ही सब उठ खड़े हुये और बड़े आदर से शीश नवा कर उनका सम्मान किया। सबने मिल कर यह भजन गाया :—

भजन

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो जागत है सो पावत है, जो सोवत है सो खोवत है॥
टुकनींद से अँखियाँ खोल जरा, और अपने प्रभु से ध्यान लगा।
यह प्रीत करन की रीति नहीं, प्रभु जागत है तू सोवत है॥
जो कल करना है आज कर ले, जो आज करना है अब कर ले।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया, फिर पछताये क्या होवत है॥
नादान भुगत करनी अपनी, ऐ पापी पाप में चैन कहाँ।
जब पाप की गठरी शीश धरी, फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है॥

शिवदत्त—स्वामी जी महाराज! आपने ईश्वर के विषय में बहुत सी नई बातें बताईं हैं। पर मैं रात भर सोचता रहा कि मैं क्या हूँ? कैसे बना? मेरा क्या होगा? आज आप कुछ इसके बारे में बताइये।

स्वामी जी—हाँ ठीक है। तुमने बड़ा अच्छा प्रश्न किया। आज मैं जीव के बारे में बताऊँगा। हम सब जीव हैं। पुरुष भी जीव हैं, स्त्रियाँ भी जीव हैं, कुत्ते, बिल्ली, शेर, चीते, बन्दर, भालू सब जीव हैं। कौवे, चील, उल्लू, चमगादड़ यह भी जीव हैं। चींटा, चींटी, कीड़े-मकोड़े सब जीव हैं। मछली, मगर, नाके सब जीव हैं। जीव की पहचान यह है कि उसमें छः बातें होनी चाहियें। *सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, ज्ञान और प्रयत्न।

सुख और दुःख को सभी समझते हैं। कुछ पदार्थ सुख देते हैं, कुछ दुःख। कुछ पदार्थ कभी सुख देते हैं और कभी दुःख। आग पर हाथ रखने से दुःख पहुँचता है और गुलाब का फूल सूंघने से सुख मिलता है। ठंडा पानी जाड़े में दुःख देता है और गरमी में सुख।

सुख देने वाली चीजों को सभी लेना चाहते हैं। इसको 'इच्छा' कहते हैं।

---

*इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुख, ज्ञानानि (आत्मनो लिंगम्) इति—न्यायदर्शन अध्याय १, आह्निक १, सूत्र १०)

दुःख देने वाले पदार्थ से सब भागना चाहते हैं। इसको 'द्वेष' कहते हैं।

चीजों के जानने का नाम ज्ञान है। ठीक-ठीक जानने को यथार्थ ज्ञान कहते हैं। गलत जानने को अज्ञान या मिथ्या ज्ञान कहते हैं। इन दोनों की गणना 'ज्ञान' में आजाती है।

'प्रयत्न' उस क्रिया का नाम है जो किसी मतलब से की जाती है। 'प्रयत्न' के लिये ज्ञान की जरूरत है।

नर, नारी, बालक, बूढ़े, जवान, कीट, पतंग सभी में सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, ज्ञान और प्रयत्न यह छः बातें पाई जाती हैं। इसलिये इनको जीवधारी या जीव कहते हैं। इन्हीं का नाम 'प्राणी' भी है। क्योंकि प्राणों से इनका जीवन चलता है।

पत्थर, लकड़ी, पृथ्वी, जल, वायु, आग, वृक्ष आदि जड़ हैं। उनमें न सुख पाया जाय, न दुःख, न इच्छा, न द्वेष, न ज्ञान, न प्रयत्न। पत्थर को किसी प्रकार का न सुख है न दुःख। वह किसी मित्र को पाने की इच्छा नहीं करता न शत्रु से बचना चाहता है। उसे कुछ भी ज्ञान नहीं। न उसमें क्रिया है। इसलिये उन चीजों को जड़ कहते हैं।

ज्ञानचन्द्र—जड़ और चेतन तो मेरी समझ में कुछ-कुछ आगया—कृपा कर के इसको और भी स्पष्ट कर दीजिये।

स्वामी जी—हाँ हाँ—और स्पष्ट करता हूँ। संसार दो प्रकार की चीजों का संघात है। एक चेतन और दूसरा जड़। जो जीवधारी हैं वह चेतन हैं। जो जीवधारी नहीं हैं वे जड़ हैं।

जीवधारियों के शरीर तो पाँच जड़ पदार्थों अर्थात् पृथ्वी, पानी, आग, हवा और आकाश का संघात है। परन्तु उनके भीतर जो जीव हैं वह चेतन है। जड़ पदार्थों से बने हुये शरीर चेतन जीव के द्वारा चेतन से दिखाई पड़ते हैं। परन्तु यह चेतनता जीवों की ही है शरीर की नहीं। मैं जिस कलम से लिखता हूँ वह जड़ है। उसे न गर्मी लगती है न सर्दी। उनमें क्रिया तो है परन्तु वह क्रिया या गति मेरी ही दी हुई है। कलम कागज पर स्वयं नहीं चलती मेरे चलाने से चलती है। उसका अपना कोई मतलब नहीं। इसलिये उसमें 'प्रयत्न' भी नहीं। कलम चलती है परन्तु कोई कोशिश नहीं करती। वह न हिन्दी जानती है न अँगरेजी। उसका कोई मतलब नहीं। इसी तरह जड़ पदार्थों में केवल गति को देख कर उनको चेतन नहीं समझ लेना चाहिये। घड़ी चलती है परन्तु घड़ीसाज के चलाने या कूक देने से। घड़ी जड़ है।

रामपदार्थ—ईश्वर सृष्टि किसके लिये बनाता है?

स्वामी जी—ईश्वर सृष्टि को अपने लिये नहीं बनाता। उसका कोई मतलब नहीं। सृष्टि जड़ पदार्थों के

लिये भी नहीं है। चेतन जीवों के लिये ही सृष्टि बनाई जाती है। दुनियाँ की सब चीज़ें चेतन जीवों के लिये हैं। अगर जीव न होते तो सृष्टि की ज़रूरत भी नहीं होती। इसलिये सृष्टि में जीव मुख्य हैं, आँख कान नाक वगैरः भी जीव के लिये हैं। नदी, पहाड़, फल, फूल, वृक्ष, लोक लोकान्तर सब जीवों के लिये हैं।

सब जीव मूलतः एक हैं। क्योंकि उन सब में इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, ज्ञान और प्रयत्न पाये जाते हैं, परन्तु इनके शरीर भिन्न भिन्न हैं। गधे का जीव, बिल्ली का जीव, मनुष्य का जीव यह सब मूल में एक हैं। परन्तु अपने गुण कर्मानुसार इनको भिन्न भिन्न शरीर मिलते हैं। इन्हीं शरीरों के द्वारा वह काम करते हैं। जैसे सब मनुष्यों के शरीरों में एक सा आत्मा है परन्तु उनकी इच्छायें अलग अलग हैं, सुख दुःख का मान दण्ड भी अलग अलग हैं। उनके ज्ञान की मात्रा और स्तर भी अलग अलग हैं और उनकी कोशिशें भी भिन्न भिन्न प्रकार की होती हैं। इसी प्रकार सब जीव जन्तुओं की प्रवृत्तियों और कामों में भी भेद होता है। इन्हीं के अनुसार उनकी योनियाँ भी भिन्न भिन्न होती हैं। इससे यह नहीं समझना चाहिये कि पशुओं के जीव भिन्न प्रकार हैं।

शिवदत्त—बहुत से लोग पशुओं में जीव नहीं

मानते। वे केवल मनुष्यों को ही जीवधारी मानते हैं। इसीलिये वे मांस खाते हैं। क्या मांस खाने में पाप है?

स्वामी जी--पाप क्यों नहीं? कुछ लोग समझते हैं कि केवल मनुष्यों में ही जीव हैं। अन्य पशु पक्षी जड़ हैं। उनके हमारा जैसा आत्मा नहीं। मुसल्मान और ईसाई लोग पशुओं में जीव नहीं मानते। इसलिये उनको पशुओं पर दया भी नहीं आती। वह गाय, बकरी आदि को मार कर खा लेते हैं। उन्हीं की देखा-देखी आर्य्य जाति में भी यह रोग लग गया।

वस्तुतः यह बात ठीक नहीं है। कुत्ते को देखो कैसा बुद्धिमान् होता है? अपने मालिक से प्यार करता है और उसकी रक्षा करता है। घोड़े में कैसी विचित्र बुद्धि है? घोड़ा युद्ध में अपने मालिक को बचाने के लिये अपने प्राण दे देता है। बिल्ली कैसी चालाकी से घरों का दूध पी जाती है? चींटियाँ मीलों चल कर अपना खाना ग्रहण करती हैं। टिड्डियों के दल के दल नियमानुसार धावा करते हैं। अगर इनमें ज्ञान, प्रयत्न, सुख, दुःख, इच्छा और द्वेष न होते तो वे इस प्रकार काम न कर सकते। इसलिये इनमें जीवात्मा न मानना या इनको जड़ समझना ठीक नहीं, और न इनको मार कर खाना चाहिये। जैसे मनुष्यों को अन्य मनुष्यों पर दया करनी चाहिये उसी प्रकार सब प्राणियों पर भी। वेद में लिखा है :—

*"सब जीवों को मित्र के समान समझो।" यह हमारी कमजोरी है कि स्वार्थ में फँस कर हम दूसरों को दुःख देते हैं। हम यह नहीं समझते कि हमारी सी ही जान सब में है। जैसे हमारे पैर में काँटा लगता है और हमको पीड़ा होती है। उसी प्रकार जब हम सुअर, बकरी, मछली, गाय आदि के गले पर छुरी चलाते हैं तो उनको भी पीड़ा होती है।

श्यामसुन्दर--अगर सब जीव समान हैं तो उनको भिन्न-भिन्न योनि क्यों दी गई?

स्वामी जी—इसका भी कारण है। ईश्वर ने न्याय-पूर्वक कार्य किया है। जिनको हम आज पशु पक्षी या चींटी, कीड़े के रूप में देखते हैं। वे भी किसी पिछले जन्म में हमारे समान मनुष्य थे। उस समय उन्होंने भी ज्ञान प्राप्त किया था। खोटे कर्मों के कारण ईश्वर ने उनको नीच योनियों में उत्पन्न कर दिया। जैसे यदि कोई लड़का तलवार से अपने भाइयों को ही मारने लगे

---

*दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। (यजुर्वेद अध्याय ३६ मन्त्र १८)

हे ईश्वर मुझमें बल दे। सब प्राणी मुझे मित्र की आंख से देखें। मैं सब प्राणियों को मित्र की आंख से देखूँ। हम सब एक दूसरे को मित्र की आँख से देखें।

तो राजा या घर का मालिक उससे तलवार छीन लेता है जिससे उसकी मारने की बुरी आदत छूट जाय। इसी प्रकार जो आदमी आंख से बहुत बुरा काम करता है उसको ईश्वर दूसरे जन्म में अन्धा पैदा करता है। जो कान से बुरी बातें सुनते हैं, उनको दूसरे जन्म में बहरा बना दिया जाता है। और जो अत्यन्त क्रूर काम करते हैं उनको नीच योनियां मिलती हैं। इसलिये मनुष्य को चाहिये कि खोटे कर्मों से बचे। मनुष्य की योनि इसलिये सबसे श्रेष्ठ मानी गई है कि उसमें हमको बुद्धि बढ़ाने और धर्म के पालन करने की अच्छी सुविधायें हैं। मनुष्यों के सिवाय कोई अन्य प्राणी वेद शास्त्र नहीं पढ़ सकते और न दान पुण्य कर सकते हैं। इसलिये मनुष्यों को खोटे कामों से बचना चाहिये। जैसा किसी राजा का गवर्नर यदि प्रजा को सतावे तो राजा उस पर अप्रसन्न होकर कहेगा कि 'मैंने तुमको प्रजा के पालने के लिये भेजा था सताने के लिये नहीं। तुमने अधर्म किया इसलिये तुम को गवर्नर के पद से उतार कर छोटा पद दिया जायगा या तुम बहुत नालायक हो इसलिये तुमको कैद में रक्खा जायगा।' इसी तरह ईश्वर भी कहता है 'कि हे मनुष्य मैंने तुझे अच्छा शरीर दिया, बुद्धि दी, बल दिया, धर्म को जानने की योग्यता दी। तूने मेरी इच्छा के विरुद्ध मेरे जीवों को दुख दिया। तू मनुष्य होने के लायक नहीं

है। तुझे दण्ड देकर नीचे की योनियों में डाला जायगा। जब तेरे पुराने बुरे संस्कार छूट जायेंगे तब तुझे फिर मनुष्य योनि देकर पुण्य करने का अवसर दिया जायगा।'

शिवदत्त—यह तो मेरी समझ में आ गया कि सब जीव समान हैं और उनको भिन्न-भिन्न योनियाँ क्यों दी गई। परन्तु मैं पशु योनि और मनुष्य योनि में कुछ भेद देखता हूँ। पशुओं को मनुष्य की तरह धर्म और अधर्म का ज्ञान नहीं होता।

स्वामी जी—ठीक बात है, धर्म और अधर्म, पुण्य और पाप का विचार मनुष्यों के लिये है। पशु पक्षियों में इतनी बुद्धि नहीं, कि सत्य असत्य, धर्म अधर्म, पुण्य पाप भले बुरे की पहचान कर सकें। ईश्वर ने उनमें बुद्धि तो दी है। परन्तु थोड़ी, वे जीवात्मा हैं। इसलिये चेतन हैं। उनमें ज्ञान की भी कुछ मात्रा जरूर है। वह कोशिश भी करते हैं। परन्तु उनको मनुष्य जैसा माथा नहीं दिया गया। वह अपने खाने पीने की ही सोच सकते हैं। लोक परलोक धर्म अधर्म की बात वह नहीं सोच सकते।

आहार निद्रा भयमैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।

धर्मो हि तेषामधिको विशेषः, धर्मेण हीनः पशुभिः समानः॥

अर्थः—खाना, सोना, डरना और मैथुन करना

यह तो जैसे मनुष्य में पाये जाते हैं वैसे पशुओं में भी। मनुष्य जैसे रोटी खाता है गधा घास खाता है। मनुष्य भी सोता है और गाय बैल भी सोते हैं। मनुष्य भी डरता है और पशु पक्षी को भी डर लगता है। मनुष्य भी स्त्री पुरुष मिलकर मैथुन करते हैं और घोड़े, घोड़ियाँ, कुत्ते, कुतिया, चिड़े और चिड़ियाँ भी इसी प्रकार का व्यवहार करती हैं। इन बातों में तो मनुष्य पशुओं के समान ही है। फिर मनुष्य में बड़प्पन क्या हुआ? केवल धर्म का ही बड़प्पन है। मनुष्य धर्म को समझ सकता है। ईश्वर की उपासना कर सकता है। दूसरों को दान दे सकता है। अगर मनुष्य भी धर्म से अलग रहे तो वह भी पशुओं के समान है। अच्छा खाने, अच्छा पहनने, भोग विलास करने से मनुष्य बड़ा नहीं बनता, धर्म दान और पुण्य करने से मनुष्य बड़ा बनता है। इसलिये पशु मत बनो, मनुष्य बनो, याद रक्खो कि तुम्हारे पास यह सुन्दर शरीर हमेशा नहीं रहेगा। जो बच्चा है वह जवान होगा। जो जवान है वह बुड्ढा होगा। जो बुड्ढा है वह मरेगा। शरीर नाशवाला है। सदा नहीं रहता। मृत्यु तो अवश्य ही आयेगी। अन्याय और हिंसा करके जो तुम धन कमा रहे हो वह सब एक दिन यहीं का यहीं रह जायगा। मुहम्मद गजनवी ने भारत पर चढ़ाई करके करोड़ों रुपयों का धन लूटा। जब मरा तो खाली हाथ गया। एक पैसा भी

अपने साथ न ले जा सका। औरंगजेब ने अपने बाप शाहजहाँ को आगरे के किले में आठ वर्ष कैद रक्खा। यह राज औरङ्गजेब के साथ नहीं गया। वह बिलक बिलक के मरा गया और अपना बुरा आदर्श दूसरों के लिये छोड़ गया। इसलिये मौत को याद करो और अधर्म, असत्य, और हिंसा से बचते रहो।

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।
तस्माद् धर्मो न हन्तव्यो मानो धर्मो हतोऽवधीत् ॥

भावार्थ :—अगर तुम धर्म की रक्षा करोगे तो धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा। अगर तुम धर्म की हत्या करोगे तो धर्म तुमको मार डालेगा। इसलिये धर्म की हत्या मत करो। नहीं तो याद रक्खो कि तुम्हारा अन्त में नाश हो जायगा।

भजन

मन पछतैहै अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाई हरि पद भजु, करम वचन अरु ही ते ॥१॥
सहसबाहु दसवदन आदि, नृप बचे न काल बली ते।
हम हम करि धन-धाम संवारे, अन्त चले उठि रीते ॥२॥
सुत वनितादि जानि स्वारथरत, न करु नेह सबही ते।
अन्तहु तोहि तजेंगे पामर! तू न तजे अबही ते ॥३॥
अब नाथहिं अनुराग जागु जड़, त्यागु दुरासा जीते।
बुझे न काम-अगिनी तुलसी कहुँ—विषय-भोग बहु घी ते ॥४॥

पाँचवीं कथा

प्रकृति विचार

पाँचवाँ दिन आया। आज प्रकृति की छटा बड़ी सुन्दर थी। आकाश निर्मल था। प्रातःकाल की वायु शरीर में उत्साह भर रही थी। आज स्वामी जी की कुटी पर और भी अधिक भीड़ थी। सबने मिलकर भजन गाया।

भजन

जलवा कोई देखे अगर इक बार तुम्हारा।
हो जाय हमेशा का खरीदार तुम्हारा॥

क्यों उसका कोई तार हो बेतार जो कोई।
चिन्तन किया करता है लगातार तुम्हारा॥

लवलीन हुआ तुम में मिटा कर जो अपने को।
तुम यार उसी के हो वही यार तुम्हारा॥

किस तरह जमीं चलती है सूरज के सहारे।
देखे कोई आलम में चमत्कार तुम्हारा॥

फूलों की तरह खिलते हैं रातों में सितारे।
आकाश बना गुलशने बेखार तुम्हारा॥

बुद्धि की पहुँच से भी परे हद तुम्हारी।
हां तर्क की सीमा से परे पार तुम्हारा॥

स्वामी जी—ईश्वर और जीव के बारे में कुछ बता चुका हूँ। अब प्रकृति के बारे में बताऊँगा जो जड़ है। हम जब अपने ऊपर विचार करते हैं तो हमको मालूम होता है कि एक तो हम स्वयं हैं जो चेतन जीवात्मा हैं। जीवात्मा निराकार है। उसको मोटा, पतला, काला, पीला, नहीं कह सकते। दूसरा हमारा शरीर है। यह शरीर नित्य बढ़ता घटता रहता है। जब हम पैदा होते हैं तो शरीर बहुत छोटा होता है। धीरे-धीरे हम बढ़ने लगते हैं। जब बीमार होते हैं तो शरीर क्षीण हो जाता है। जवानी में शरीर बलवान होता है। बुढ़ापे में घिसने लगता है। अन्त में मृत्यु हो जाती है। वेद में लिखा है :—

भस्मान्तं७ँ शरीरं (यजुर्वेद अध्याय ४०, मन्त्र १५) अर्थात् शरीर अन्त में भस्म हो जाता है।

यह शरीर चेतन नहीं जड़ है। ज्ञान शून्य है। हमारे संसर्ग से इसमें चेतनता आती है।

शरीर पाँच तत्वों से बना है। इनका नाम है—

क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा।

अर्थात् पृथ्वी (माटी), जल (पानी), पावक (आग), गगन (आकाश) समीर (वायु)।

जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी, और आकाश को पंचभूत भी कहते हैं। इसलिये शरीर को पंचभौतिक शरीर भी कहा है। हमारे शरीर की पांच इन्द्रियों में से हर एक में

एक एक तत्व की प्रधानता है। आँख में अग्नि तत्व प्रधान है शेष गौण अग्नि का गुण है रूप। इसलिये आँख से रूप को देखते हैं।

नाक में पृथ्वी तत्व प्रधान है शेष गौण, पृथ्वी का गुण है गन्ध। इसलिये नाक से गन्ध सूंघते हैं।

वायु का स्पर्श गुण है। त्वचा में वायु का अंश प्रधान है अन्य तत्व गौण। इसलिये त्वचा (खाल) से स्पर्श अर्थात् कोमलता, कठोरता, गरम, सर्द का भान होता है।

जीभ में जल का तत्त्व प्रधान है। अन्य चार तत्त्व गौण रूप से हैं। जल का गुण है स्वाद! इसलिये जीभ से स्वाद का ग्रहण होता है।

कान में आकाश तत्त्व प्रधान है। आकाश का गुण है शब्द, इसलिये कान से शब्द सुनाई देता है।

इस प्रकार शरीर में पाँच इन्द्रियाँ हुई। उनके गोलक अर्थात् शरीर के वे पाँच अङ्ग जिनको इन्द्रियाँ कहते हैं पाँच भूतों से मिलकर बने हैं। समस्त जड़ जगत् और चेतन जीवों के भौतिक शरीर पाँच तत्त्वों के बने हुये हैं। यह पाँच भूत पाँच सूक्ष्म तत्त्वों से बने हैं। और अगर इसी प्रकार पीछे की ओर चलते जायं तो सब संसार का मूल एक परम तत्त्व है जिसको प्रकृति कहते हैं।

शिवदत्त—आपने बताया है कि ईश्वर अनादि है।

जीवात्मा अनादि है। क्या प्रकृति भी अनादि है? इसका गुण क्या है।

स्वामी—यह प्रकृति अनादि है। न कभी पैदा हुई न नष्ट होगी। इसका रूप बदलता रहता है। इसलिये इसको 'अजा' (न पैदा होने वाली) कहते हैं।

इस प्रकृति के तीन गुण बताये गये हैं। *शुक्ल या सतोगुण, लोहित या रजोगुण, कृष्ण या तमोगुण। इसके तीन, और नाम भी हैं। शुक्ल का नाम है प्रकाश, लोहित का नाम है क्रिया, कृष्ण का नाम है स्थिति। इस प्रकार त्रिगुणात्मिका प्रकृति से त्रिगुणात्मक जगत् बन जाता है। जगत् को विकृति कहते हैं। क्योंकि यह विकार से बना है।

प्रकाश का गुण है ज्ञान। शरीर में जब सतोगुण प्रधान होता है तब मनुष्य का मन धर्म, ज्ञान और पुण्य की ओर लगता है।

जब शरीर में रजोगुण प्रधान होता है तो दौड़ने धूपने, लड़ने भिड़ने को जी करता है।

जब शरीर में तमोगुण प्रधान होता है तो शरीर में

---

* प्रकाशक्रिया स्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मक भोगापवर्गार्थं दृश्यम्।

(पातंजलिकृत योगदर्शन साधन पाद, २, सूत्र १८)

आलस्य और प्रमाद बढ़ता है और जी चाहता है सोता रहूँ कुछ न करूँ।

ज्ञानी मनुष्य सदा कोशिश करता है कि उसकी वृत्ति सतोगुणी हो। जब तमोगुणी या रजोगुणी वृत्ति प्रधान मालूम होती है तो वह अपनी इच्छा शक्ति और ज्ञान की सहायता से उन वृत्तियों को हटाने की कोशिश करता है। प्रातःकाल यदि उठने को जी न चाहे या मन में बुरे भाव उठें तो ज्ञानी मनुष्य उनको रोकने की कोशिश करता है। जैसे झटका देकर कपड़े की धूल झाड़ देते हैं इसी प्रकार ज्ञानी मनुष्य अपने मन को झटका देकर बुरी प्रवृत्तियों को दूर भगा देते हैं। इस प्रकार इच्छा शक्ति की सहायता से तमोगुणी वृत्ति रजोगुणी और रजोगुणी वृत्ति सतोगुणी हो जाती है। यदि प्रातःकाल आलस्य सताने लगे और उठने का जी न करे तो मन को झटका देकर उठ खड़े हो और टहलना शुरू कर दो। जब टहलने लगोगे तो तमोगुणी वृत्ति दूर होकर रजोगुणी वृत्ति आ जायगी। जब शुद्ध हवा में टहल रहे हो और विषय वासना के विचार मन में उठ रहे हों तो मन को फिर झटका देकर धर्म की ओर फेर दो। सतोगुणी वृत्ति जग उठेगी। ज्ञानी लोग इसी प्रकार आलस्य प्रमाद और बुरी वासनाओं को जीतते हैं। जो मूर्ख हैं वह तमोगुण में ही फंसे रहते हैं।

ज्ञानचन्द्र—स्वामी जी ! फिर कल्याण का मार्ग कौन सा है ?

स्वामी—मान लो तुम एक घाटी के बीच में खड़े हो। वहाँ से दो रास्ते हैं। एक रास्ता ऊपर को जाता है। इसको श्रेय मार्ग कहते हैं। दूसरा नीचे को जाता है। इसको प्रेय मार्ग कहते हैं। जो श्रेय मार्ग की ओर चल पड़ते हैं उनको पहले कठिनाई होती है। फिर वह एक स्वच्छ सुन्दर बाग में पहुँच जाते हैं जहाँ सुख ही सुख है। दुःख नहीं। यह स्वर्ग का रास्ता है। यह रास्ता बड़ा कठिन है परन्तु है परम आनन्द का। दूसरा प्रेय मार्ग आसान है। इस पर चलने में परिश्रम नहीं करना पड़ता परन्तु अन्त में मनुष्य नीचे गड्ढे में आ गिरता है। यह है नरक का मार्ग। यहाँ अन्त में दुःख ही दुःख है। सुख कुछ भी नहीं।

ऊपर चढ़ने में कष्ट होता है। नीचे उतरने में कष्ट नहीं होता। परन्तु ऊपर चढ़ने वाले रम्य पर्वत की उज्वल शिखिर पर पहुँच जाते हैं। और नीचे की ओर चलने वाले गहरी खाई में गिरते हैं जहाँ कीचड़ ही कीचड़ है।

जितने अच्छे काम हैं और उन्नति के मार्ग हैं उनपर चलने में कठिनाई होती है। विद्या पढ़ने वाले को आरम्भ में दुःख उठाने पड़ते हैं। परन्तु जब वह विद्वान हो जाता है तो विद्या का स्वाद लेकर अपने को भाग्यवान समझता

है। इसी प्रकार दान देने, परोपकार करने में पहले कठिनाई होती है और पीछे सुख होता है। यह है श्रेय मार्ग।

जो कष्ट उठाना और परिश्रम करना नहीं चाहता। वह खेल कूद और विषय वासना में फँसा रहता है। और जब अज्ञानी होने के कारण दुःख उठाता है तो पछताता है। यह है प्रेय मार्ग। जिसने कष्ट उठाकर धर्म कमाया वह आनन्द करेगा। उसके लिये स्वर्ग का दरवाजा खुला है।

जिसने पहले मौज की और कष्ट से भागता रहा वह पीछे दुःख में पड़ेगा। वह नीचे चला गया। वह बिना इच्छा के भी नरक में ढकेल दिया गया।

इसलिये जब विषय वासनायें तुमको लालच में फंसाने लगें तो तुम जाग जाओ। धोखे में मत रहो। अपना मार्ग बदल दो। अन्त में आनन्द में रहोगे। काम, क्रोध, लोभ, मोह यह चार ठग हैं जो तुमको प्रेय मार्ग की ओर ले जाकर नरक में ढकेल देते हैं।

जो विवेकी पुरुष हैं वे ज्ञान के प्रकाश में इन ठगों की ठगाई से अपनी रक्षा करते हैं और अन्त में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति करके आनन्द मनाते हैं।

दुनियाँ में तीन चीजें हैं। ईश्वर, जीव और प्रकृति।

जीव इन दो के बीच में लटका हुआ है जैसे आग, वायु, और जल। जब वायु आग से मिलती तो गर्म हो जाती है। जब जल से मिलती है तो शीतल हो जाती है। इसी प्रकार जीव जब आनन्द स्वरूप ईश्वर से संपर्क करता है तो आनन्दमय हो जाता है। और जब प्रकृति से सम्पर्क करता है तो दुःखी होता है।

बुद्धदेव—प्रकृति के गुण तो मेरी समझ में आ गये। कृपा करके हमको उपदेश दीजिये कि किस प्रकार का हम प्रकृति से सम्बन्ध रक्खें जो हमारे लिये कल्याण कारक हो।

स्वामी जी—प्रकृति से हमारा शरीर बना है। संसार की अन्य सब चीजें प्रकृति की बनी हैं। ईश्वर का भक्त इनको अपने वश में रखकर ईश्वर तक पहुँचता है। जो प्रकृति के बश में हो जाता है वह ईश्वर से विमुख होकर दुःख उठाता है।

याद रक्खो कि प्रकृति एक घोड़े के समान है। जब तक तुम घोड़े पर सवार हो और घोड़े की लगाम तुम्हारे हाथ में है तुम मंजिल पर पहुँच सकते हो। अगर तुमने घोड़े की लगाम छोड़ दी और उसके वश में हो गये तो वह उछलता कूदता किसी खांई खंदक में गिर पड़ेगा। स्वयं भी मरेगा और तुमको भी ले डूबेगा।

शराब पीने वाले, मांस खाने वाले, दुराचार करने

वाले लोग उस संवार के समान हैं जिसने अपने शरीर रूपी घोड़े की लगाम छोड़ दी है। यह बुरी आदतें उसको एक दिन गढ़े में गिरा कर छोड़ेंगी।

जो मनुष्य इस शरीर को सदा वश में रखता है और इन्द्रियों को विचलित होने नहीं देता उसका जी धर्म और पुण्य के कामों में लगता है और वह उन्नति की चोटी पर पहुँच जाता है।

महात्मा और बदमाश में यही भेद है। महात्मा शरीर को वश में रखता है। बदमाश शरीर के वश में घूमता है।

भजन

किस पर्दे में निहाँ है ओ ला मकान वाले ?
अपना पता बता दे ओ बे-निशान वाले ॥
फिरते हैं तेरी धुन में सारे जहान वाले।
करते हैं तेरी इज्जत जन्नत निशान वाले ॥
इतना पता बता दे तू किस जगह मिलेगा ?
ऐ खालिके दो आलम ये आन बान वाले ॥
काबे में मैंने देखा काशी में मैंने ढूँढा।
तेरा पता न पाया आली निशान वाले ॥
कुछ तो बता ही दे तू अपना पता ओ खालिक।
किस जाँ है तेरा रहना सारे जहान वाले।
'गोविन्द' अगर है ख्वाहिश वेदों का पाठ कर तू।
उसको हैं ढूँढ लेते वेदों के ज्ञान वाले ॥

छठवीं कथा

समाज की व्यवस्था

आज कथा का छठा दिन है। स्वामी जी की कथा बड़ी रोचक और ज्ञानवर्धक होती है। इसलिये लोगों के हृदयों में उनके प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न हो गई है। वे बड़े ध्यान से सुनते हैं और उस पर मनन करते हैं। आज स्वामी जी समाज की व्यवस्था के बारे में उपदेश देने वाले हैं। जनता में बड़ा उत्साह है। स्वामी जी के साथ सबने यह भजन गाया।

भजन

जाति को जीवन दो भगवान्!
आशा का अंकुर उपजा दो, परहित का पीयूष पिला दो,
सेवा का सन्मार्ग सुझा दो, साहस का सोपान—
जाति को जीवन दो भगवान्!
प्रेम एकता का वर वर दो, ज्ञान उजाला घर घर कर दो,
कूट कूट हृदयों में भर दो, 'स्वाभिमान...सम्मान"
जाति को जीवन दो भगवान्!

दलितों के अधिकार दिला दो, बिछुड़ों को फिर गले लगा दो,
भेद-भाव का भूत भगा दो, हों सब लोग समान.
जाति को जीवन दो भगवान् !
विधवा दल के संकट टारो, गो-कुल के कुल क्लेश निवारो,
बलहीनों में बल सञ्चारो, निर्भय करो निदान,
जाति को जीवन दो भगवान् !
देश-भक्ति की ज्योति जगा दो, धर्म-धाम का द्वार दिखा दो,
कर्मवीर बनना बतला दो, कर दयालुता दान,
जाति को जीवन दो भगवान ।

स्वामी जी—मनुष्य एक सामाजिक जीव है । वह अकेला नहीं रहता । हजारों मनुष्य साथ साथ गाँवों और नगरों में रहते हैं । शेर के समान किसी जंगल की मांद् में रहकर उनका गुजारा नहीं होता । इसलिये समाज का विधान बनाने की जरूरत पड़ती है ।

वैदिक ऋषियों ने समाज का एक सुन्दर विधान बनाया था । उससे अच्छा विधान अब तक किसी ने सोच कर नहीं निकाला ।

इस विधान का नाम है वर्णाश्रम धर्म । वर्ण चार हैं । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र !

पहले उच्चतम वर्ण का नाम ब्राह्मण है । वे लोग जो अच्छे स्वभाव के और विद्याप्रिय हों उनको यह काम सौंपा गया कि वह दूसरों को पढ़ावें, देश और

जाति की ज्ञान-वृद्धि करें। उनको उपदेश करें और ऐसी विचार तरंगों को देश में उत्पन्न न होने देवें जिनसे जाति या देश का भविष्य खतरे में हो जाय। ब्राह्मण वह है जो विद्या पढ़े पढ़ावे, त्यागी तपस्वी हो, ईश्वर का भक्त हो और ईश्वर के सिवाय किसी से न डरे। दूसरे वर्णों का कर्तव्य है कि ब्राह्मण को दक्षिणा दें और उसको कष्ट में न रहने देवें। परन्तु ब्राह्मण का भी कर्तव्य है कि लोभी और लालची न हो।

दूसरा वर्ण है क्षत्रिय। जो बलवान हैं और दूसरों की रक्षा कर सकते हैं उनका वर्ण है क्षत्रिय। क्षत्रिय का यह नाम इसलिये पड़ा कि वह चोर डाकू और अत्याचारियों को दण्ड देकर क्षत* अर्थात् कष्ट से लोगों की रक्षा करता है। देश का शासन प्रबन्ध क्षत्रियों के हाथ में दिया जाता है। क्षत्रिय में यह गुण होना चाहिये।

(१) शारीरिक बल हो।

(२) विषयी और लम्पट न हो।

(३) भय न करे।

(४) दूसरों को व्यर्थ भयभीत न करे।

(५) लालची न हो।

---

*क्षतात्किल त्रायत इत्युदग्रः क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः।
(कालिदास का रघुवंश, सर्ग २ श्लोक ५३).

(६) रक्षा करने के लिये सदा उद्यत रहे।

(७) गरीबों को न सतायें।

(८) देश के नियमों का पालन करें, न अधर्म पर चले न दूसरों को अधर्म पर चलने दे।

तीसरा वर्ण है वैश्य वर्ण! वैश्य का कर्तव्य है कि सब प्रकार से देश और जाति के धन की संवृद्धि में सहायक हो और पूरा पूरा उद्योग करे। खेती करना, व्यापार, कला कौशल, अच्छी अच्छी चीजें बनाना और उनको देश देशान्तर में पहुँचाना यह सब वैश्य का काम है। लोहार, बढ़ई, सुनार, थवई, इंजीनियर, कुम्हार जुलाहे, कारीगर यह सब वैश्य वर्ण के लोग हैं। क्योंकि इनसे धन की संवृद्धि होती है।

वैश्यों के लिये सबसे बड़ा काम यह है कि देश का कोई भाग भूखों न मरे। ब्रह्मचारियों, वानप्रस्थियों और संन्यासियों को दान द्वारा खाना पहुँचाया जाय। अन्य गृहस्थों को व्यापार और क्रय विक्रय द्वारा खाना पहुँचाया जाय। जिन देशों में खाना कम होता है वहाँ उन देशों से खाना लाया जाय जहाँ खेती अधिक अच्छी होती है। जहाँ खेती अच्छी नहीं हो सकती और लोहे कोयले आदि आदि की खानें हैं वहाँ के लोगों में कला कौशल की उन्नति करना वैश्यों का काम है। मजदूरी करने वाले लोगों की रोजी का प्रबन्ध भी वैश्यों का कर्तव्य है। जो

निर्धन हैं और थोड़े से धन से व्यापार कर सकते हैं उनको थोड़ी सी ब्याज पर रुपया देकर व्यापार में लगाना भी वैश्यों का काम है।

परन्तु वैश्यों को धन कमाने के साथ धन का लोभी नहीं बनना चाहिये। जो धन कमावें उसको व्यसनों में न उड़ावें। दूसरों को दान देवें। और ऐसा व्यापार न करें जिससे दूसरों की रोजी मारी जाय और वे दरिद्र हो जायं।

चौथा वर्ण शूद्र है। शूद्र वह लोग हैं जो बुद्धि के बहुत ही मन्द हैं। उनको स्वयं कुछ करने की योग्यता नहीं। वह दूसरों के इशारों पर काम कर सकते हैं। इनका कर्तव्य है कि वह ब्राह्मणों क्षत्रियों और वैश्यों के कामों में मदद देवें। खोटे कर्म न करें। न किसी को धोखा देवें। अपने शारीरिक परिश्रम से मजदूरी कमावें।

यह हुये चार वर्ण। परन्तु यह नहीं समझना चाहिये कि वर्णों से तात्पर्य हिन्दू जाति की वर्तमान जाति बिरादरियों से है। यह जात बिरादरियां वर्ण नहीं हैं। अपितु वर्णों का उलटा है। जात बिरादरियां रोटी बेटी का भेद भाव रखती हैं और जन्म पर निर्भर हैं। आजकल ब्राह्मण का लड़का ब्राह्मण ही कहलाता है चाहे वह मूर्ख और दुराचारी ही क्यों न हो और चमार का लड़का चमार ही रहता है चाहे वह विद्वान् और धर्मात्मा ही क्यों न हो

इस जन्म परक जात बिरादरी ने देश में अज्ञान द्वेष, भेद भाव और मिथ्याभिमान बढ़ा दिया है। और हिन्दू जाति असंगठित होकर ह्रास को प्राप्त हो गई है। योग्य प्राचीन ब्राह्मण कुलों के लड़के नालायक होकर भी ब्राह्मण कहलाते और विद्या-वृद्धि में रोड़ा अटकाते हैं। प्राचीन वीर क्षत्रिय वंश की अयोग्य सन्तान क्षत्रिय कहलाते हैं और इससे किसी की रक्षा नहीं होती। कई वैश्य जातियां जैसे कुम्हार, जुलाहे शूद्र गिने जाते हैं। और लोग उनको न छूते हैं न उनको पढ़कर तरक्की करने देते हैं। इस प्रकार अंधेर नगरी चौपट राज हो रहा है।

शिवदत्त—मेरी समझ में आ गया कि वर्ण व्यवस्था का निर्माण क्यों हुआ था। पर समाज में छूत और अछूत के भाव कैसे उत्पन्न हो गये?

स्वामी जी—जब जाति का पतन आरम्भ हुआ तो बुद्धि भ्रष्ट हो गई। समाज का संगठन बिगड़ गया। हर वर्ण वाले अपने को उच्च और दूसरों को नीच समझने लगे। इस प्रकार अनेक जाति उपजातियाँ उत्पन्न हो गई। समाज को बलिष्ठ बनाने के लिये जो एकता आवश्यक थी वह नष्ट हो गई। वर्ण व्यवस्था भी अब गुण कर्म स्वभावानुसार नहीं रह गई थी। वह जन्म के अनुसार मानी जानी लगी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य वर्ण वाले शूद्र वर्ण वालों से द्वेष करने लगे। उनको समाज से बाहर निकाल

दिया गया, उनकी अलग बस्तियाँ बन गईं, उनके कुयें अलग बने। हिन्दुओं के मंदिर में उनको घुसने की आज्ञा न थी। वे वेदों को मानने वाले थे, वैदिक धर्मी थे पर हिन्दू समाज में उनका कोई स्थान नहीं था। इस प्रकार आपस में द्वेष के भाव जगे। एक दूसरे को अलग अलग समझने लगे। यह अवस्था इतनी बढ़ी कि दक्षिण भारत में अछूत के मुख को देखना भी पाप समझा जाने लगा। बिचारे अछूतों को यह भी आज्ञा न थी कि वे सड़कों पर निकल सकते।

ज्ञानचन्द्र—इतना अन्याय? हा दैव!

स्वामी जी—हाँ इन बिचारों के साथ ऐसा अन्याय किया गया। कुत्ते बिल्लियों को गोद में लेना बुरी नहीं समझा जाता था, परन्तु इन अछूतों के साथ पशु से भी बुरा व्यवहार होने लगा। ऋषि दयानन्द ने सबसे पहले लोगों को बताया कि ऐसा व्यवहार उचित नहीं। समाज को बलवान बनाने के लिये उनकी भी उतनी ही आवश्यककता है जितनी उच्च वर्ण की। फिर वर्णव्यवस्था गुण कर्म स्वभाव के अनुसार होनी चाहिये।

रामचन्द्र—धन्य है ऋषि दयानन्द! आर्य समाज ने इस सम्बन्ध में क्या किया?

स्वामी जी—आर्य समाज ने उनका प्रवेश आर्यसमाज के मंदिरों में कराया। इस पर समाज में बड़ी हलचल

मची। लोगों ने आर्यों का विरोध किया पर ऋषि के भक्त डटे रहे। अछूतों को यज्ञोपवीत दिये गये, वेदमन्त्र सिखाये गये। उनको शिक्षा देने के लिये अछूतों की पाठशालायें खोली गईं। अछूतों में नशे की बुरी लत थी, यह आदत छुड़ाने की कोशिश की गई। इस सब कार्य में उच्च वर्ण वालों ने बड़ी बाधायें डालीं, पर आर्य डटे रहे।

रामपदार्थ—आर्य समाज ने यह बड़ी प्रशंसा का काम किया। पर काँग्रेसी कहते हैं कि महात्मा गाँधी ने उनका उद्धार किया?

स्वामी जी—महात्मा गाँधी से पचास बरस पहले आर्य समाज ने यह काम आरम्भ किया था। महात्मा गाँधी ने राजनैतिक कारणों से इसमें सहायता दी। अंग्रेजों की चाल थी कि हरिजनों को हिन्दुओं से अलग कर दिया जाय। महात्मा गाँधी ने इसको रोकने के लिये लिये अपने प्राणों की बाज़ी लगा दी। इस प्रकार हरिजन हिन्दू जाति के भाग बने रहे। यह महात्मा गाँधी की बहुत बड़ी सेवा थी। महात्मा गाँधी जी ने आर्य समाज के कार्य को आगे बढ़ाया।

ज्ञानचन्द्र—इतना होने पर भी लोग अब भी उनसे घृणा करते हैं?

स्वामी जी—यह सब धींगा धींगी है। अब तो भारत स्वतन्त्र हो गया है। इसके राजनियम के अनुसार हम किसी को अछूत नहीं कह सकते। अछूतों को पूरा अधिकार है कि वे रेलगाड़ी में बैठें, होटल, बाजार, स्कूल, सभा मन्दिर में घुस जाँय। कोई उच्च वर्ण वाला यह नहीं

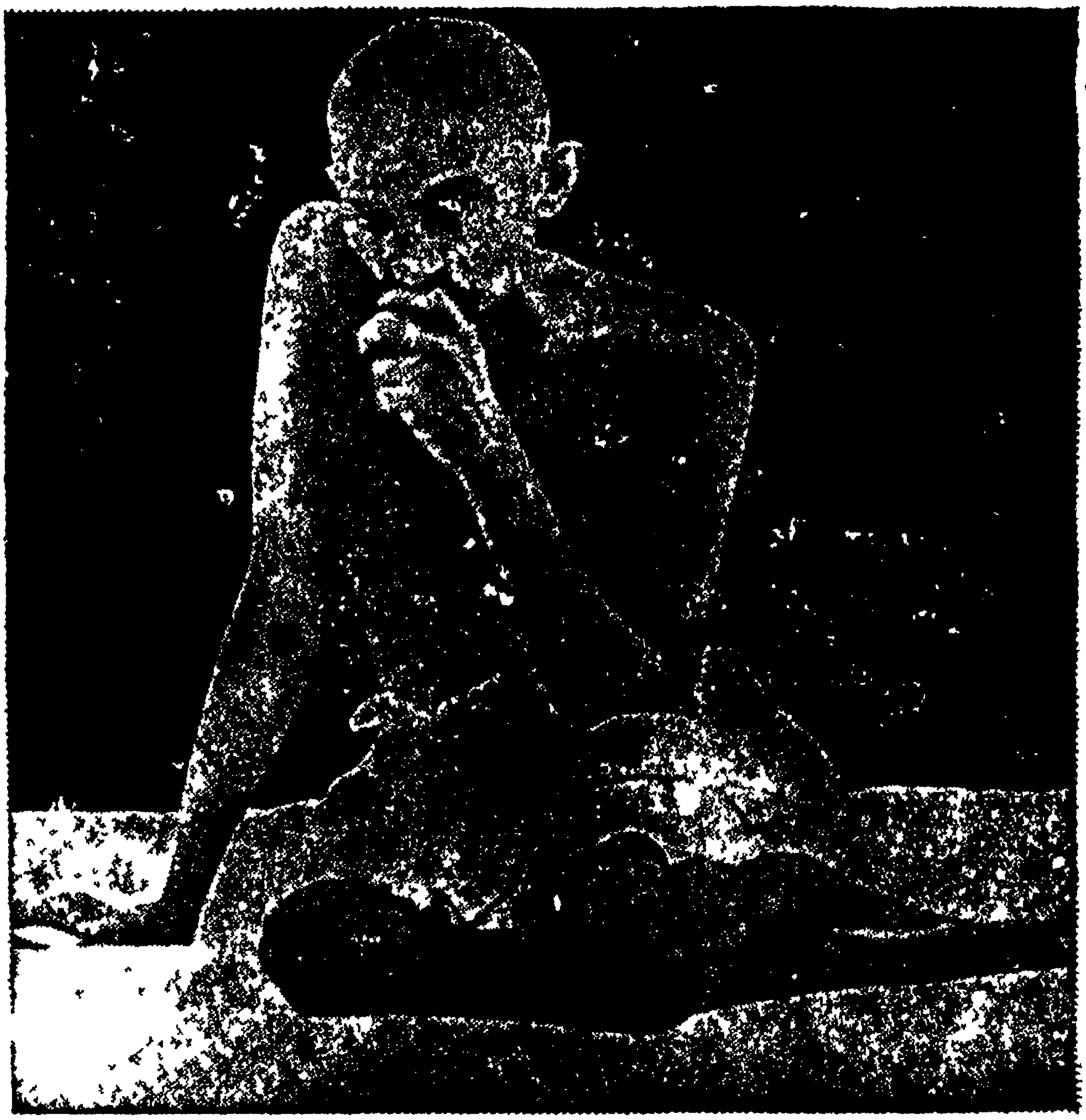

महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गाँधी

कह सकता आप दूर हटिये, जो ऐसा करेगा उसको राजनियम के अनुसार दण्ड दिया जायगा।

शिवदत्त--समाज में धार्मिक स्वतंत्रता होनी चाहिये या नहीं ?

स्वामी जी--हर समाज में पूरी धार्मिक स्वतंत्रता होनी चाहिये। आज हम बैठे हुये धर्म के सिद्धान्तों पर निर्भीकता से विचार कर रहे हैं। यह सब भी स्वामी दयानन्द की कृपा का फल है। स्वामी जी से पूर्व धार्मिक सिद्धान्तों पर विचार करने की स्वतंत्रता न थी। जो बताया गया चुपचाप मान लिया। जो पुस्तकों में पढ़ा उस पर आँख बन्द करके विश्वास कर लिया। "क्यों ? और कैसे ?" कहा नहीं कि पाप लग गया। ऋषि दयानन्द ने हमें सिखाया कि आँखें बन्द करके किसी बात को न मानो। उस पर विचार करो। युक्ति दो, यदि विचार और युक्ति से तुम्हारी समझ में आजाये तो मान लो। नहीं तो ठुकरा दो।

शिवदत्त--सच्चाई वही है जो कसौटी पर कसी जा सके।

स्वामी जी--हाँ यही बात है। स्वामी दयानन्द ने व्याख्यान दिये। उन्होंने सनातनी हिन्दू, मुसलमान और ईसाइयों से शास्त्रार्थ किये। इस प्रकार जनता में धर्म के विषय में बड़ी जागृति हुई। बहुत से हिन्दू अपने धर्म को छोड़कर लोगों के बहकाने में ईसाई और मुसल्मान हो जाते थे। आर्य समाज ने इस बहती लहर को त्याग, तपस्या और बलिदानों के द्वारा रोका। आर्य

समाज ने लोगों को बतलाया कि जिस प्रकार एक हिन्दू अपना धर्म बदल कर ईसाई या मुसलमान हो सकता है इसी प्रकार यदि मुसलमान या ईसाई वेदों पर ईमान लावें तो वह हिन्दू या वैदिक धर्मी हो सकता है। यह एक नई बात थी। एक हजार वर्ष से हिन्दू समाज ने अपने लालों को ठुकराकर विधर्मियों के हाथों में अर्पित कर दिया था। यदि किसी हिन्दू ने गलती से किसी मुसलमान का जूंठा पानी या खाना खा लिया तो वह धर्म भ्रष्ट हो गया। उसका हिन्दू समाज में कोई स्थान नहीं। इस प्रकार लाखों की संख्या में हिन्दू मुसलमान हो गये थे। पर आर्य समाज ने हिन्दुओं को मुसलमान और ईसाई होने से न केवल रोका ही पर उसके साथ साथ उनको शुद्ध भी किया।

मुसलमान लोग इस बात से बहुत चिढ़ गये। उन्होंने सोचा कि आर्य समाजी कहने सुनने से न मानेंगे। इसलिये इनको डंडे के जोर से शान्त करना चाहिये। धर्मवीर पं० लेखराम आर्य मुसाफिर आर्यसमाज के प्रसिद्ध नेता थे। मुसलमानों से शास्त्रार्थ किया करते थे। वे मुसलमानों को शुद्ध करते थे। एक धर्मान्ध मुसलमान शुद्ध होने के बहाने ६ मार्च १८९७ ई० को आया। वह कम्बल के अन्दर कटार छिपा कर ले गया था। पंडित जी उसकी मदद करने को तैयार थे। उसने मौका पाकर कटार

पं० लेखराम जी की छाती में मार दी। पंडित जी का बलिदान हो गया। पर क्या उनके बलिदान से आर्यसमाज

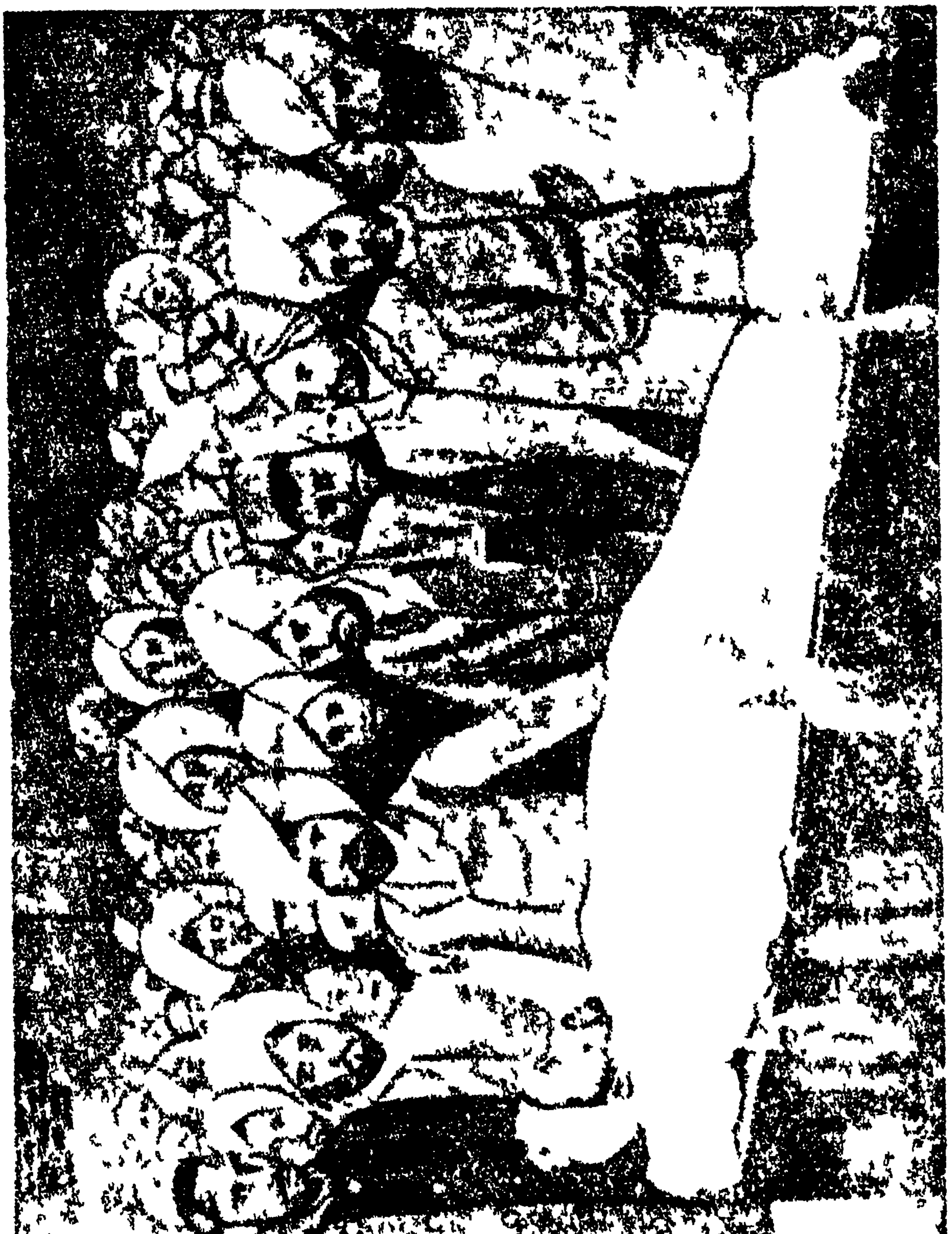

पं० लेखराम जी मृत्यु शय्या पर

का कार्य रुक सकता था ? जो कई सौ लेखराम नहीं कर सकते थे वह उनके बलिदान ने कर दिया।

ज्ञानचन्द--धन्य हैं पं० लेखराम जी !

स्वामी जी--स्वामी श्रद्धानन्द जी आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता था। उन्होंने स्वतंत्रता के संग्राम में भी भाग लिया था। उन्होंने देखा कि बहुत से मलकाने राजपूत जिनकी संख्या लाखों थी फिर से हिन्दू होना चाहते हैं। सन् १६२३ ई० में हिन्दू शुद्धि सभा की स्थापना आगरे में हुई। स्वामी जी उसके प्रधान बनाये गये। उन्होंने प्रमुख राजपूतों तथा राजाओं को तैयार किया कि वे इन शुद्ध होने वालों के साथ भोजन करें और उनको अपनी बिरादरी में मिला लें। स्वामी श्रद्धानन्द के तेज के आगे सब झुक गये। थोड़े से समय में १८ लाख से अधिक

स्वामी श्रद्धानन्द जी

मलकाने राजपूतों की शुद्धि हो गई। इससे मुसलमानों में बड़ा जोश फैला। स्वामी श्रद्धानन्द जी दिल्ली में बीमार पड़े थे। २३ दिसम्बर १९२६ को एक मुसलमान बन्दूक लेकर आया और उसने स्वामी श्रद्धानन्द जी की छाती पर गोली चलाई। स्वामी जी का बलिदान हो गया।

शिवदत्त—इतना बड़ा बलिदान?

स्वामी जी—हाँ! आर्य समाज सदा त्याग, तपस्या और बलिदान के लिये तैयार रहा है। आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द ने अपना बलिदान देकर यह शिक्षा दी थी कि धर्म पर बलिदान होना चाहिये। उनकी यह शिक्षा बराबर फूल फल रही है। पर आर्य समाज कभी द्वेष करना नहीं सिखाता। आर्य समाज कभी यह नहीं कहता कि मुसलमान, ईसाई या अन्य धर्म वालों के साथ अन्याय किया जाय। वह न अपनी धार्मिक स्वतंत्रता खो सकता है और न दूसरों की धार्मिक स्वतन्त्रता में बाधा पहुँचाता है। वह तो इस बात की शिक्षा देता है कि सबके साथ प्रेम का व्यवहार करो। अपने सिद्धान्तों की शिक्षा प्रेम से दो और इस पर कोई वैदिक धर्म में आना चाहे तो उसको अपने धर्म में मिला लो।

ज्ञानचन्द्र—धार्मिक स्वतंत्रता के लिये आर्य समाज ने और क्या किया?

स्वामी जी—हैदराबाद रियासत में आर्य और हिन्दुओं

की धार्मिक स्वतंत्रता छीनी जाने लगी। वहाँ के मुसल-
मानी राज ने आर्य्य समाज मन्दिर बनाना, यज्ञशाला

बनाना, यज्ञ करना, मन्दिरों पर झंडे लगाना, बन्द करा दिया। इस समय आर्य्य समाज के नेता तपस्वी, त्यागवीर

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज
शोलापुर के स्टेशन पर सत्याग्रह प्रस्थान के लिये

श्री महात्मा नारायण स्वामी थे। उन्होंने निज़ाम सरकार

को चुनौती दी और जब सरकार ने उनकी बात न सुनी तो उन्होंने ३० जनवरी १६३६ को सत्याग्रह छेड़ दिया। दस हजार से अधिक सत्याग्रही निजाम की जेलों में बन्द हो गये। निजाम सरकार ने बड़ा जुल्म किया। २८ सत्याग्रहियों ने इस युद्ध में अपना बलिदान दिया। अन्त में आर्य समाज की विजय हुई। रियासत में फिर से यज्ञ करने की आज्ञा मिल गई। आर्य समाज ने यह सत्याग्रह हिन्दू सनातनी भाइयों की रक्षा के लिये भी किया था। इस प्रकार आर्य समाज सदा से धार्मिक स्वतंत्रता के लिये त्याग करता रहा है।

शिवदत्त—समाज की व्यवस्था के लिये और क्या आवश्यक है?

स्वामी जी—समाज का कर्तव्य है कि हर व्यक्ति को अच्छी शिक्षा दी जाय। शिक्षा से ही मनुष्य मनुष्य कहाने का अधिकारी है। आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द ने शिक्षा पर बड़ा बल दिया था। जब उनका देहान्त हुआ तो उनके भक्त श्री पं० गुरुदत्त जी विद्यार्थी एम० ए०, महात्मा हंसराज और लाला लाजपतराय ने लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज खोला। त्यागमूर्ति महात्मा हंसराज ने अपना सारा जीवन अर्पित कर दिया और जीवन भर बिना वेतन लिये कार्य करते रहे। उनके त्याग से प्रेरित होकर पंजाब, उत्तर प्रदेश में कई

लाला लाजपतराय

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी एम० ए०

दयानन्द स्कूल खुल गये। अब तो हर बड़े नगर में आर्य समाज की ओर से स्कूल खुले हुये हैं। इसमें पढ़ने वालों

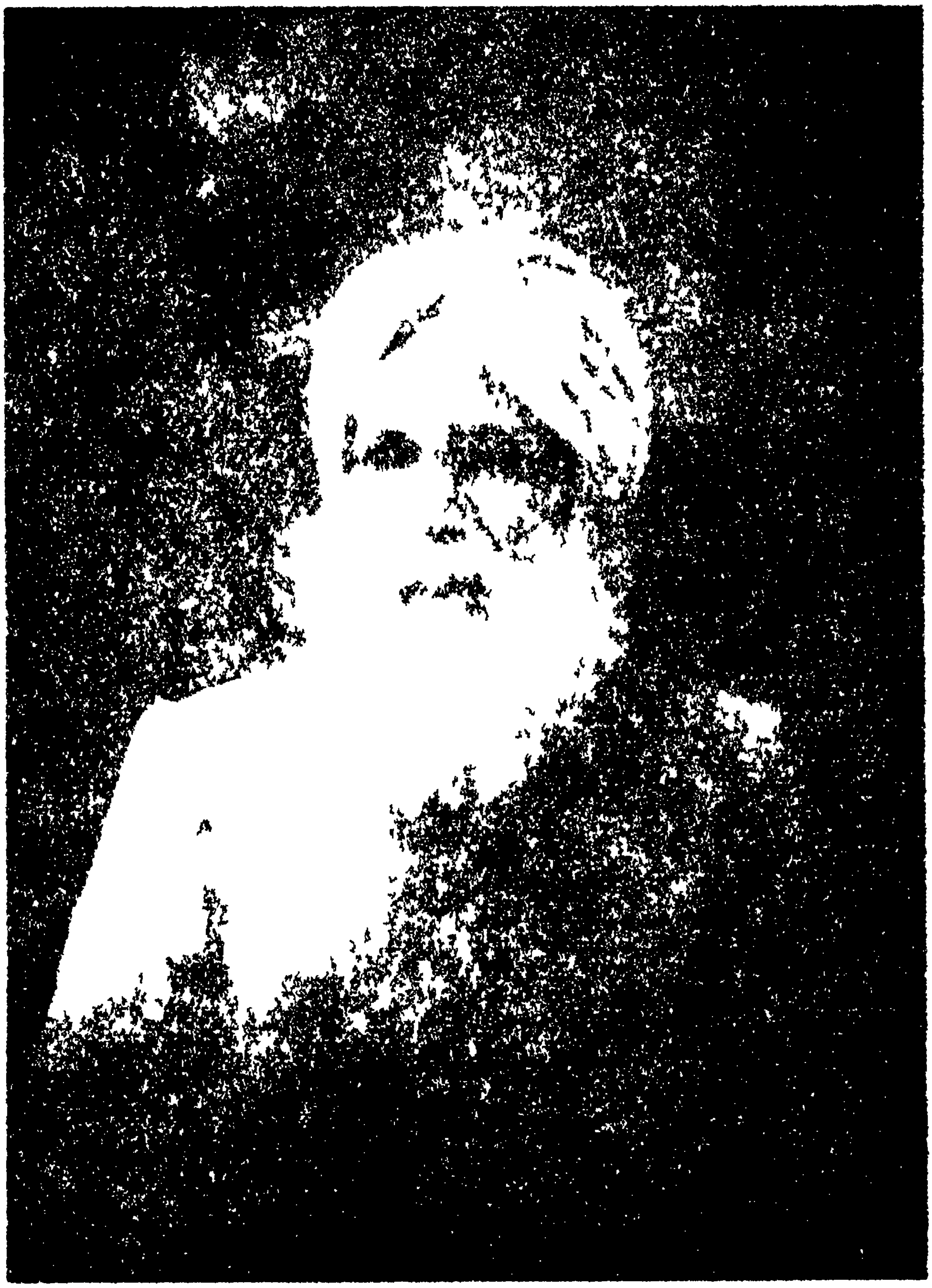

महात्मा हंसराज

की संख्या लाखों में है। इन स्कूलों में स्कूली पढ़ाई के साथ साथ धार्मिक शिक्षा भी दी जाती है।

महात्मा मुंशीरामजी, (जो बाद में स्वामी श्रद्धानन्द जी के नाम से प्रसिद्ध हुये) ने अपनी वकालत को छोड़कर कांगड़ी में गुरुकुल की स्थापना की। हमारे देश में हजारों वर्ष पहले इसी प्रकार के गुरुकुल पाये जाते थे जिनमें रहकर विद्यार्थी शिक्षा पाते थे। इसमें विद्यार्थी घर नहीं जाने पाते। वे गुरु के पास रहकर ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करते हुये वेद शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त करते हैं। हमारे प्रान्त में श्री पं० भगवान-दीन जी तथा महात्मा नारायण स्वामी जी के उद्योग से वृन्दावन में गुरुकुल बना। इस समय देश में बहुत से गुरुकुल शिक्षा दे रहे हैं।

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी

आर्य समाज ने स्त्रियों और कन्याओं की शिक्षा के लिये सबसे अधिक उद्योग किया। आर्य समाज की

स्थापना के पहले स्त्रियों को शिक्षा न दी जाती थी। आर्य समाज ने सबसे पहले कन्याओं के लिये पाठशालायें खोलीं। अब तो देश भर में सैकड़ों पाठशालायें हैं।

इसलिये यह आवश्यक है कि हर गाँव और नगर में लड़के और लड़कियों के स्कूल खोलने चाहिये। अब तो सरकार से भी इस काम में बहुत मदद मिलती है। धनी व्यक्तियों को चाहिये कि विद्यादान के लिये दान दें क्योंकि कहा गया है कि "सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते" सब दानों में विद्या दान उत्तम है।

ज्ञानचन्द्र—आर्य समाज ने शिक्षा का प्रचार करके समाज की बड़ी सेवा की है।

स्वामी जी—समाज का एक और आवश्यक कर्तव्य है। वह है आचार विचार की व्यवस्था करना। समाज में युवक और युवतियां होती है। उनके लिये उच्च आदर्श रक्खे जाने चाहिये। जिस समाज में धन वाला अधिक आदर पाता है और धार्मिक व्यक्ति कम, वह समाज नष्ट हो जाता है। इसलिये समाज का यह धर्म है कि पतित व्यक्तियों को अधिक सम्मान नहीं देना चाहिये। फिर ऐसे प्रलोभनों को भी दूर करना चाहिये जिनमे आचार भ्रष्ट हों। उदाहरण के लिये शराब की दूकानों पर रोक लगानी चाहिये। शराब वेचने वाले तो चाहते हैं कि हर चौराहे पर शराब की दूकान खुल जाय। इस सम्बन्ध में समाज

का यह कर्तव्य है कि कम से कम दूकान खुलें। फिर दुकान ऐसे स्थान पर खुले जो आम जगह न हो। सरकार की सहायता से इन पर रोक लगायी जाय। इसी प्रकार जुवे के स्थान, व्यभिचार के अड्डों आदि पर भी रोकथाम की जाय। आर्य समाज तो इन कुरीतियों को दूर करने के लिये सदा से प्रयत्न करता आ रहा है। हर समाज के व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि समाज की सेवा करें।

ज्ञानचन्द्र—स्त्रियों का समाज में कैसा स्थान होना चाहिये? स्वामी दयानन्द का इस सम्बन्ध में क्या मत है?

स्वामी जी—स्वामी दयानन्द स्त्री जगत के परमोद्धारक थे। भारतीय समाज में स्त्रियों का घोर अनादर होता था। श्री स्वामी जी ने बताया कि स्त्रियों का स्थान बड़ा ऊँचा है?

मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद

(शतपथ ब्राह्मण)

अर्थात् माता, पिता, गुरु जब तीनों उत्तम होते हैं तभी सन्तान ज्ञानवान होती है।

इसलिये स्वामी जी ने कन्याओं की शिक्षा पर विशेष बल दिया। उन्होंने बताया कि लड़कों के समान लड़कियों की भी शिक्षा होनी चाहिये।

ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्

(अथर्व वेद)

अर्थात् कन्या ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके वेद शास्त्रों को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त होके पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश विद्वान् युवा पुरुष को प्राप्त होवे।

शिवचन्द्र—क्या स्त्रियाँ भी वेद शास्त्र पढ़ सकती हैं? मैंने सुना है कि:—

स्त्री शूद्रौ नाधीयतामिति श्रुतेः

स्त्री और शूद्र न पढ़ें यह श्रुति है।

स्वामी जी—यह सब कपोल कल्पित बातें हैं। किसी प्रामाणिक ग्रन्थ का यह श्लोक नहीं। देखो श्रौत सूत्रादि में आया है।

इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्

अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मंत्र को पढ़े। यदि स्त्री वेद शास्त्र नहीं पढ़ी होगी तो मंत्र क्या बोलेगी।

आर्य समाज ने कन्याओं के लिये गुरुकुल और पाठशालायें स्थान स्थान पर खोली हैं। लोगों को चाहिये कि इस प्रकार का प्रबन्ध गाँव गाँव में हो जाय।

स्वामी जी ने यह भी शिक्षा दी कि कन्याओं का विवाह जल्दी न किया जाय जैसी कि समाज में प्रथा थी। उन्होंने बताया कि कन्याओं का विवाह कम से कम

सोलह वर्ष की अवस्था में किया जाय जिससे वे परिवार का पालन भली प्रकार कर सकें ।

शिवदत्त—विवाह के सम्बन्ध में स्वामी दयानन्द का क्या मत है ?

स्वामी जी—स्वामी दयानन्द जी महाराज ने बताया कि ब्रह्मचर्य आश्रम व्यतीत करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करें । स्वामी जी बहु विवाह के विरुद्ध थे । उन्होंने बताया कि एक समय में एक से अधिक विवाह न किया जाय क्योंकि इससे गृह कलह बढ़ता है ।

उन्होंने बताया

सन्तुष्टो भार्यया भर्त्ता भर्त्रा भार्या तथैव च
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्

(मनुस्मृति ३-६०)

अर्थात् जिस कुल में भार्या से भर्त्ता और पति से पत्नी भले प्रकार प्रसन्न रहते हैं उसी कुल में सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं । जहाँ कलह होता है वहाँ दुर्भाग्य और दरिद्रता आती है ।

ज्ञानचन्द्र—आर्य समाज विधवा विवाह कराता है ।

स्वामी जी—इसमें क्या हानि है ? पुरुष अपनी स्त्री के मरते ही दूसरा विवाह चट से कर लेते हैं, पर वे इस बात की आशा करते हैं कि बेचारी कन्यायें ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करेंगी । यह स्त्री जाति के साथ बड़ा अन्याय है । इसलिये जो विधवा ब्रह्मचर्य व्रत न रख सके उनके

विवाह का प्रबन्ध कर देना चाहिये। ऐसा न करने से विधवायें कुमार्ग पर चली जाती हैं और समाज में बड़ा अनादर होता है। वे घर से भागकर विधर्मियों के हाथों में पड़ जाती हैं। अतः समाज के नैतिक स्तर को ठीक रखने के लिये यदि विधवाओं का विवाह कर दिया जाय तो कोई हानि नहीं। पर जो विधवायें जीवन भर अपना धर्म निभा सकें वे अविवाहित रहें।

मनु महाराज ने लिखा है

> यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
> यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफलाः क्रियाः॥

जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है वहाँ सब प्रकार का आनन्द रहता है। जहाँ स्त्रियों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं होता वहाँ दुःख ही दुःख रहता है।

कल्याणचन्द्र—समाज के ऊपर कभी आपत्तियाँ आ जाया करती हैं। यह क्यों आया करती हैं? उनसे कैसे छुटकारा हो सकता है?

स्वामी जी—संसार में हर प्राणी तीन प्रकार के तापों से दुःखी है। आध्यात्मिक ताप, आधिभौतिक ताप और आधिदैविक ताप। आध्यात्मिक ताप या दुःख वह हैं जो प्राणी के अपने मन या शरीर की दुर्बलता के कारण होते हैं जैसे ज्वर आना, सिर में दर्द होना, दस्त हो जाना, या मन में ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध का होना।

अधिभौतिक ताप वह हैं जो दूसरे प्राणियों से पहुँचते हैं। जैसे सांप काट ले, दुश्मन हमला कर दे, या चोर डाकू माल चुरा ले जावे। या कोई झूठा मुकद्दमा चला दे।

आधिदैविक ताप वह हैं जो दैवगति से आते हैं जैसे बिजली गिरना, अतिवर्षा होना, भूकम्प आना, सूखा पड़ना आदि।

तीनों तापों से बचने के लिये मनुष्य प्रयत्न किया करता है। जो सबसे अधिक सफलता प्राप्त करले उसी को पुरुषार्थी* कहते हैं।

इन तीन प्रकार के दुखों का कारण है अविद्या या अज्ञान। जब मनुष्य को ज्ञान नहीं होता तो उसके मन में क्रोध या बुरी वासना उठती है। उसका आचरण बिगड़ जाता है। वह परहेज नहीं करता इसलिये ज्वर आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। जब समाज में अज्ञान बढ़ जाता है तब परस्पर ईर्ष्या डाह जलन और वैर भाव बढ़ जाते हैं जिससे लोग चोरी, ठगी, और मारपीट करते हैं।

जब अज्ञान के कारण पाप बढ़ता है तो ईश्वर भी कोप करता है और भूकम्प, सूखा, वर्षा आदि तापों को संसार में भेज देता है। इन सबसे बचने का एक ही मुख्य

---

* अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृतिरत्यन्तपुरुषार्थः।
(कपिल मुनि का सांख्यदर्शन अध्याय १ सूत्र १)

उपाय है कि स्वयं धार्मिक बनें तथा समाज को भी नैतिक मार्ग पर चलावें।

भजन

टेक—हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये।
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिये
ऐसी कृपा और अनुग्रह हमपे हो परमात्मा।
हों सभासद इस सभा के सब के सब धर्मात्मा ॥ १ ॥
हो उजाला सब के मन में ज्ञान के प्रकाश से।
और अन्धेरा दूर सारा हो अविद्या नाश से ॥ २ ॥
खोटे कर्मों से बचें तेरे ही गुण गावें सभी।
छूट जावें दुःख सारे सुख सदा पावें सभी ॥ ३ ॥
सारी विद्याओं को सीखें ज्ञान से भरपूर हों।
शुभ करम में होवें तत्पर दुष्ट गुण सब दूर हों ॥ ४ ॥
यज्ञ हवन से हो सुगन्धित अपना भारतवर्ष देश।
वायु जल सुखदाई होवें जांय मिट सारे क्लेश ॥ ५ ॥
वेद के प्रचार में होवें सभी पुरुषार्थी।
होवे आपस मे प्रीति और बनें परमार्थी ॥ ६ ॥
लोभी कामी और क्रोधी कोई भी हममें न हो।
सारे व्यसनों से बचें और छोड़ देवें मोह को ॥ ७ ॥
अच्छी संगत में रहें और वेद मारग पर चलें।
तेरे ही होवें उपासक और कुकर्मों से बचें ॥ ८ ॥
कीजिये केवल का हृदय शुद्ध अपने ज्ञान से।
मान भक्तों मे बढ़ाओ उसका भक्ति दान से ॥ ९ ॥

सातवीं कथा

अपनी उन्नति के साधन

सातवीं कथा बड़े महत्व की थी। आज स्वामी जी ने व्यक्तिगत उन्नति के साधन बताने को कहा था। सभी भक्त अपने जीवन को पवित्र बनाना चाहते थे। अतः वे आज उपदेश के सुनने के लिये और दिन से अधिक उत्सुक थे।

भजन

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अन्तर्यामी करनी कछु न करी ।१॥
औगुन मोसे बिसरत नाहीं पल छिन घरी घरी ॥२॥
सब परपञ्च की पोट बाँध कर अपने शीश धरी ॥३॥
दारा सुत धन मोह लियो सुध बुध सब बिसरी ॥४॥
'सूर' पतित को बेग उबारो मेरी नाव भरी ॥५॥

स्वामी जी—प्रिय धर्मानुरागियो! कुछ दिनों से हमारा समय धार्मिक सत्संग में बीत रहा है। इसको

अपना अहोभाग्य समझना चाहिये। यह सब भगवान् की ही कृपा है। ईश्वर ने दया करके हमें मनुष्य योनि दी है। इसी योनि में हम अपनी उन्नति कर सकते हैं। इसलिये आज मैं कुछ बातें बताऊँगा जिससे हमारी उन्नति हो सके। आशा है कि आप उन पर भली प्रकार विचार करेंगे। हमारे जीवन को चार भागों में बाँटा गया है। इनको आश्रम के नाम से सम्बोधित किया गया है।

आश्रम चार हैं। मनुष्य जीवन के यह चार भाग हैं। पहला आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम है। जब मनुष्य पैदा होता है तो कच्चा होता है। न ज्ञान होता है, न शक्ति, न कुछ कर सकता है। न अपनी रक्षा कर सकता है। पहले माता पिता उसकी देखभाल करते हैं और उसको चलना फिरना, बैठना उठना, खाना पीना, बोलना चालना सिखाते हैं। कुछ बड़ा होने पर वह गुरू के पास पढ़ने के लिये बिठाला जाता है। इसी को ब्रह्मचर्य आश्रम कहते हैं। इसकी अवधि कम से कम २५ साल की रक्खी गई है। जैसे कच्ची ईंटें भट्टे में पकाकर मजबूत बन जाती हैं इसी प्रकार २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य आश्रम की भट्टी में रह कर मनुष्य पक जाता और शक्तिशाली हो जाता है। यदि ब्रह्मचर्य का विधान और प्रबन्ध ठीक है तो देश और जाति के नागरिक पक्के और बलवान् होते हैं और उनको आगे की यात्रा में कुछ कठिनाई नहीं होती। यदि

ईंट का भट्टा अच्छा नहीं है तो ईंटें कच्ची और निर्बल होंगी और उनसे बना हुआ मकान भी जल्दी गिर जायगा।

इन २५ वर्षों के ब्रह्मचर्य का प्रबन्ध तीन व्यक्तियों के हाथ में है। एक माता पाँच वर्ष तक बच्चे का पालन करती है। यदि माता योग्य हो तो वह अपने बच्चे को अच्छी अच्छी बातें सिखाये। माँ की गोद में पलता हुआ योग्य माता का बच्चा बिना परिश्रम के बहुत सी ज्ञान की बातें सीख जावेगा। यदि माता कुलच्छिणी है तो उसका बच्चा आरम्भ से ही बुरी बुरी बातें सीखेगा और उसको फिर सुधरने में कठिनाई पड़ेगी।

पाँच वर्ष के पीछे बच्चा पिता के साथ रहने लगता है। यदि पिता विद्वान् और नेक चलन है तो बच्चा भी वैसा ही होगा। बुरे बाप का बेटा भी बुरी ही बातें सीखेगा।

तीसरा गुरू—जब बचा आठ साल के लगभग हो तो उसका उपनयन संस्कार (जनेऊ) कराके उसे अच्छे गुरू की पाठशाला में भेज देवें। यह नियम लड़के और लड़की दोनों के लिये समान हैं। छोटी आयु में भाई बहन मा बाप के साथ रहते हैं। बड़े होने पर उनको अपनी अस-मानता का ज्ञान होने लगता है अतः लड़कियों को लड़-कियों की पाठशाला में योग्य अध्यापिकाओं के पास पढ़ाने

बिठालना चाहिये और लड़कों को लड़कों की पाठशाला में। उपनयन या जनेऊ दोनों का होना चाहिये।

ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिणी को तीन बातें अवश्य सिखानी चाहिये :—

(१) कुचेष्टा और बुरी बातों से बचकर ब्रह्मचर्य रखना और व्यायाम (कसरत) आदि करना, सरल जीवन रखना बुरी रीति के शौकों से बचना। इससे शरीर पुष्ट हो जाय रोग न लगे।

(२) विद्या पढ़ना।

(३) दूसरों के साथ अच्छा बर्ताव करना। ईश्वर से डरना और परोपकार करने के लिये स्वार्थ त्याग करना।

जब लड़का २५ वर्ष का हो जाय और लड़की १६ वर्ष की तो दूसरा आश्रम आरम्भ होता है। इसका नाम है गृहस्थ आश्रम।

बचपन में विवाह नहीं करना चाहिये। इससे मनुष्य को रोग लग जाते, सन्तान कमजोर होती और जाति नष्ट हो जाती है। भारतवर्ष में जब से बच्चे बच्चियों के विवाह होने लगे ब्रह्मचर्याश्रम की प्रथा बिगड़ गई और गृहस्थी लोग दुःख भोगने लगे। पक्के ब्रह्मचारी ही सुखी गृहस्थ हो सकते हैं। गृहस्थियों का काम है :—

(१) सन्तान उत्पन्न करना और उसको योग्य बनाना।

(२) धन कमाना। धर्म से, न कि अधर्म से।

(३) दान देना और दूसरे आश्रमों का पालन करना।

(४) देश और जाति को सुसंगठित करना और मनुष्य जाति को बुरी बातों से बचाना।

तीसरा आश्रम है वाणप्रस्थ या बन जाने का आश्रम। वन में जाकर तप करना और संसार का मोह छोड़ देना।

चौथा आश्रम है संन्यास आश्रम। संन्यासी सब प्रकार का भेद भाव और मोह छोड़कर संसार को उपदेश देता और गृहस्थों को बुरी बातों से बचाता है।

इन चार आश्रमों को पूरा पालन करने से मनुष्य का लोक और परलोक दोनों बनता है। मरने पर उसे कष्ट नहीं होता और मरने के पश्चात् उसको अच्छा जन्म मिलता अथवा मोक्ष की प्राप्ति होती है।

वानप्रस्थ और संन्यास होने के लिये वैराग्य की जरूरत है जो गृहस्थी लम्पट बीमार या कमजोर मन का है वह वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम को भी बदनाम करता है। इन चारों आश्रमों में यम और नियम का ठीक पालन आवश्यक है।

शिवदत्त—स्वामीजी! यम और नियम क्या हैं?

स्वामी—यम ५ हैं*

(१) अहिंसा = सब प्राणियों के प्रति प्रेम का व्यवहार करना (२) सत्य (३) अस्तेय = मन वचन कर्म से चोरी न करना (४) ब्रह्मचर्य (५) अपरिग्रह = लोभ अभिमान आदि दोषों से रहित होना।

नियम भी पांच हैं†

(१) शौच = स्नान आदि से शरीर को पवित्र रखना (२) सन्तोष = पुरुषार्थ करते हुये जो मिल जाय उस पर संतुष्ट रहना (३) तप—धर्म युक्त कामों को कष्ट सहते हुये भी करना (४) स्वाध्याय = वेद, शास्त्र आदि सद् ग्रन्थों का पढ़ना (५) ईश्वर प्रणिधान = अपनी आत्मा में ईश्वर भक्ति लगाना।

ज्ञानचन्द्र—स्वामीजी यज्ञ किसको कहते हैं ? उसके करने से क्या लाभ होता है।

स्वामी जी—वेदों में यज्ञ की बड़ी महिमा है। यजुर्वेद में लिखा है :—

"आयुर्यज्ञेन कल्पताम्" (यजुर्वेद अध्याय २२ मंत्र ३३)

हमारी आयु यज्ञ से बनाई जाय !

---

*तत्राहिंसासत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।

योग दर्शन (साधनपदे सूत्र ३०)

†शौच सन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमः।

योग दर्शन (साधन पादे सूत्र ३२)

मुख्य यज्ञ पाँच हैं जिनको पंच महायज्ञ कहते हैं। हरे आदमी को यह पाँचों यज्ञ रोज करना चाहिये। इन यज्ञों के नाम यह है :—

(१) ब्रह्म यज्ञ।

(२) देव यज्ञ।

(३) पितृ यज्ञ।

(४) अतिथि यज्ञ।

(५) भूत यज्ञ।

ब्रह्मयज्ञ में अग्नि जलानी नहीं पड़ती। न कुण्ड खोदना या आहुतियाँ देना पड़ता है।

ब्रह्म यज्ञ के दो मुख्य भाग हैं। ईश्वर की उपासना और वेदों का स्वाध्याय!

ईश्वर प्रार्थना के विषय में हम तीसरी कथा में कह चुके हैं।

प्रातःकाल स्नान आदि करके ईश्वर का ध्यान करना चाहिये। सन्ध्या की पूरी विधि सन्ध्या की पुस्तकों में दी हुई है। जो लोग कम पढ़े हैं, गायत्री मन्त्र का जप कर सकते हैं। गायत्री मन्त्र यह है :—

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।

(यजुर्वेद ३६।३)

गायत्री को सावित्री भी कहते हैं।* इसको बड़ा पवित्र माना गया है।

तीन और मन्त्र प्रार्थना के लिये दिये जाते हैं। इन को भी पढ़ना चाहिये। जैसे जैसे योग्यता बढ़े अन्य पुस्तकों से अच्छे अच्छे वेद मन्त्रों का पाठ करना चाहिये।

मन्त्र २

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रं तन्न आसुव। (यजुर्वेद ३०।३)

---

* अथ सावित्री। सविता वै देवानां प्रसविता तथो हाऽस्माऽते सवितृप्रसूता एव सर्वे कामाः समृध्यन्ते।
(शतपथ ब्राह्मण काण्ड २ अध्याय ३ ब्राह्मण ४ कण्डिका ३९)

ईश्वर सब देवों का प्रेरक है। उसकी प्रेरणा से सब कामनायें सिद्ध होती हैं।

अर्थ—(१) गायत्री :—

(ओ३म्) परमेश्वर का नाम है। सब प्रकार से रक्षा करने वाला। (भूः) सत्तावान् (भुवः) चेतन स्वरूप (स्वः) सुखकारक। (सवितुःदेवस्य) उस प्रेरक देव की (वरेण्यं) कल्याणकारी, शुभ (भर्गः) पापनाशक शक्ति को (धीमहि) हम धारण करें। (योनः धियः प्रचोदयात्) वह ईश्वर हमारी बुद्धियों को ठीक कामों में लगावें।

(२) (देव सवितः) हे सब प्रकार के प्रेरक ईश्वर (विश्वानि दुरितानि) सब बुराइयों को (परासुव) दूर कीजिये। (यद्भद्रं) जो शुभ गुण हों (तत् नः आसुव) वह हमको प्राप्त कराइये।

मंत्र ३

यां मेधां देव गणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु ॥ (यजुर्वेद ३२।१४)

मंत्र ४

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ (यजुर्वेद ४०।१६)

दूसरा यज्ञ है देव यज्ञ । देव यज्ञ को होम या अग्नि होम भी कहते हैं । इसकी विधि यह है ।

संध्या के पश्चात् एक तांबे, या मिट्टी के कुण्ड में आम, पीपल, पलाश आदि की सूखी लकड़ियाँ, जिनको समिधा कहते हैं, चुन लीजिये । और मंत्रों को पढ़कर

---

(३) (यां मेधां) जिस बुद्धि की (देवगणाः पितरश्च) विद्वान् और पितर लोग याचना करते हैं (तया मेधया) उस बुद्धि से (अद्य) आज (माम्) मुझको (अग्ने) हे परमेश्वर (मेधाविनं कुरू) बुद्धिमान् बनाइये ।

(४) (अग्ने देव) हे ईश्वर प्रभो (विश्वानि वयुनानि) आप सब ज्ञानों को (विद्वान्) जानते हैं । (अस्मान्) हमको (राये) आनन्द रूपी धन के लिये (सुपथा नय) अच्छे पथ पर लगाइये (अस्मत्) हमसे (जुहुराणं एनः) भयानक पाप को (युयोधि) दूर रखिये । (ते) आपको (भूयिष्ठां नमः उक्ति) बहुत बहुत स्तुति (विधेय) हम करते हैं ।

घी सामग्री आदि की आहुतियाँ दीजिये। सामग्री* में सुगंध-युक्त पदार्थ और शक्कर या चीनी मिलानी चाहिये। घी शुद्ध होना चाहिये। हवन के मंत्र पंचमहायज्ञ विधि में दिये हुये हैं। जो पढ़े नहीं और मंत्र याद करने की शक्ति नहीं रखते वह गायत्री मंत्र पढ़कर ही १६ आहुतियाँ दे दिया करें। हर अमावस्या और पूर्णमासी के दिन किसी योग्य पण्डित को बुलाकर यज्ञ करा दिया करें। इससे घर और गांव की हवा शुद्ध होगी, वेदों का स्वाध्याय होगा और सुगन्ध के मस्तिष्क में पहुँचने से बुद्धि बढ़ेगी।

आजकल तमाखू और बीड़ी पीने का इतना रिवाज है कि तमाखू का जहर हवा में फैल जाता है। और वह बहुत से रोग उत्पन्न कर देता है। मां बाप बच्चों को गोद में लिये हुये या चारपाई पर पास लिटाये हुये तमाखू

---

* हवन सामग्री में क्या क्या होना चाहिये।

छारछबीला, नागर मोथा, बालछड़, कपूर कचरी, चंदनचूरा गरी, मखाना, छुआरा, चावल, तिल, जौ, इनको छटांक छटांक भर कूट कर मिला लो और एक तोला बड़ी इलायची और २ तोला लौंग भी मिला दो। हवन करते समय आधी छटांक सामग्री मे १ तोला चीनी मिला लेनी चाहिये। एक तोला घी से भी सस्ता हवन किया जा सकता है। मंहगाई के दिनो में न करने से थोड़ा करना अच्छा है।

के धुएं छोड़ते रहते हैं। इनसे बहुत सी बीमारियां पैदा होती हैं। अगर तमाखू पीना छोड़ दिया जाय और हवन का सुगन्ध युक्त धुआं हवा में फैले तो रोग के किटाणु भी मर जायं और लोगों की बुद्धि भी उज्वल हो जाय।

हर गृहस्थ को चाहिये कि वह रोज हवन किया करे। बहुत से लोग समझते हैं कि यज्ञ में पशुओं को बलि चढ़ाकर उनका मांस डाला जाता था। यह बात ग़लत है और अज्ञानी स्वार्थी वाम मार्ग पर चलने वाले लोगों की उड़ाई हुई है। वेद में पशु के मांस को होम में डालने का विधान नहीं है। यज्ञ का तो प्रयोजन ही यह है कि किसी की हिंसा न हो और जगत् का उपकार हो।

रामपदार्थ—श्राद्ध और तर्पण करना चाहिये या नहीं।

स्वामी जी—श्राद्ध और तर्पण मरे हुये पितरों के लिये नहीं किया जाता। जीवित मां बाप की सेवा करना ही श्राद्ध है और यही तर्पण। इसको पितृ यज्ञ कहते हैं। पितृ यज्ञ तीसरा महायज्ञ है।

जो माता या पिता मर गये। उनका प्रथम तो पता ही नहीं लगता कि वह कहाँ हैं। फिर उनको खाना कहाँ पहुँचावें और कैसे? उन्होंने तो दूसरी योनियों में जन्म

ले लिया, जैसी करनी तैसी भरनी। जैसे कर्म उन्होंने किये उसी के अनुसार उनको जन्म मिल गया।

स्वार्थी पंडितों ने अपने खाने के लिये यह मिथ्या बात उड़ाई है कि पितरों को पिण्ड देना चाहिये। पिण्डों को खाने के लिये पितर तो नहीं आते। हाँ हलवा पूरी खाने के लिये पंडित पुजारी और महाब्राह्मण आ जाते हैं। यह स्वार्थी लोगों की करतूत है। बुद्धिमान् लोग इनके जाल में नहीं फंसते। इस विषय में एक कथा दी जाती है :—

एक जाट था। उसके घर में एक गाय बहुत अच्छी और बीस सेर दूध देने वाली थी, दूध उसका बड़ा स्वादिष्ट होता था। कभी २ पुरोहितजी के मुख में भी पड़ता था। उसका पुरोहित यही ध्यान कर रहा था कि जब जाट का बुड्ढा बाप मरने लगेगा तब इसी गाय का संकल्प करा लूँगा। कुछ दिनों में दैवयोग से उसके बाप का मरण समय आया। जीभ बन्द हो गई और खाट से भूमि पर ले लिया अर्थात् प्राण छोड़ने का समय आ पहुँचा। उस समय जाट के इष्ट मित्र और सम्बन्धी भी उपस्थित हुए थे। तब पुरोहितजी ने पुकारा कि यजमान ! अब तू इसके हाथ से गोदान करा। जाट १०) निकाल पिता के हाथ में रखकर बोला पढ़ो संकल्प ! पुरोहित बोला वाह २ क्या बाप बारम्बार मरता है ? इस समय तो साक्षात् गाय को

लाओ जो दूध देती हो, सब प्रकार उत्तम हो। ऐसी गौ दान कराना चाहिये।

जाटजी—हमारे पास तो एक ही गाय है उसके बिना हमारे लड़के बालों का निर्वाह न हो सकेगा। इसलिये उसको न दूँगा। लो २०) रुपये का संकल्प पढ़ देओ और इन रुपयों से दूसरी दुधार गाय ले लेना।

पुरोहितजी—वाह जी वाह! तुम अपने बाप से भी गाय को अधिक समझते हो? क्या अपने बाप को वैतरणी नदी में दुःख देना चाहते हो। तुम अच्छे सुपुत्र हुये।

तब तो पुरोहितजी की ओर सब कुटुम्बी हो गये। क्योंकि उन सब को ही पुरोहितजी ने बहका रक्खा था और उस समय भी इशारा कर दिया। सब ने मिल कर हठ से उसी गाय का दान उसी पुरोहितजी को दिला दिया उस समय जाट कुछ भी न बोला। उसका पिता मर गया और पुरोहितजी बच्चा सहित गाय और दोहने की बटलोई को ले अपने घर में गौ बाँध बटलोई धर पुनः जाट के घर आया और मृतक के साथ श्मशान भूमि में जाकर दाह कर्म्म कराया। वहाँ भी कुछ कुछ पोपलीला चलाई, पश्चात् दशगात्र सपिंडी कराने आदि में भी उसको मूँड़ा। महाब्राह्मणों ने भी लूटा और भुक्कड़ों ने भी बहुत सा माल पेट में भरा अर्थात् जब सब क्रिया हो चुकी तब जाट ने जिस किसी के घर से दूध मांग-मूंग निर्वाह

किया। चौदहवें दिन प्रातःकाल पुरोहित के घर पहुँचा। देखें तो गाय दुह, बटलोई भर उठने की तैयारी थी। इतने ही में जाटजी पहुँचे। उसको देख पुरोहितजी बोले आइये यजमान! बैठिये!

जाटजी—तुम भी पुरोहितजी इधर आओ।

पुरोहितजी—अच्छा दूध धर आऊँ।

जाटजी—नहीं २ दूध की बटलोई इधर लाओ। पुरोहितजी बिचारे जा बैठे और बटलोई सामने धर दी।

जाटजी—तुम बड़े झूठे हो।

पुरोहितजी—क्या झूठ किया।

जाटजी—कहो तुमने गाय किसलिये ली थी।

पुरोहितजी—तुम्हारे पिता को वैतरणी नदी तरने के लिये।

जाटजी—अच्छा तो तुमने वैतरणी नदी के किनारे पर गाय क्यों नहीं पहुँचाई? हमतो तुम्हारे भरोसे पर रहे और तुम अपने घर बाँध बैठे। न जाने मेरे बाप ने वैतरणी नदी में कितने गोते खाये होंगे?

पुरोहितजी—नहीं २ वहाँ बस दान के पुण्य के प्रभाव से दूसरी गाय बनकर उसको उतार दिया होगा।

जाटजी—वैतरणी नदी यहाँ से कितनी दूर और किधर की ओर है?

पुरोहितजी—अनुमान से कोई तीस करोड़ कोस दूर है क्योंकि उनचास कोटि योजन पृथ्वी है। और दक्षिण नैऋत्य दिशा में वैतरणी नदी है।

जाटजी—इतनी दूर में तुम्हारी चिट्ठी वा तार के पहुँचने की खबर या उसका उत्तर आया हो कि वहाँ पुण्य की गाय बन गई, अमुक के पिता को पार उतार दिया, दिखलाओ।

पुरोहितजी—हमारे पास गरुणपुराण के लेख के अतिरिक्त डाक या तार बरकी दूसरी कोई नहीं।

जाटजी—इस गरुणपुराण को हम सच्चा कैसे मानें?

पुरोहितजी—जैसे सब मानते हैं।

जाटजी—यह पुस्तक तुम्हारे पुरुषाओं ने तुम्हारी जीविका के लिये बनायी है क्योंकि पिता को बिना अपने पुत्रों के कोई प्रिय नहीं। जब मेरा पिता मेरे पास चिट्ठी पत्री व तार भेजेगा तभी मैं वैतरणी नदी के किनारे गाय पहुँचा दूंगा और उनको पार उतार पुनः गाय को घर में ले आ दूध को मैं और मेरे लड़के बाले पिया करेंगे, लाओ! दूध की भरी हुई बटलोई।

गाय, बछड़ा लेकर जाटजी अपने घर को चल दिये।

पुरोहितजी—तुम दान देकर लेते हो तुम्हारा सत्यानाश हो जायगा।

जाटजी—चुप रहो, नहीं तो तेरह दिन दूध के बिना जितना दुःख हमने पाया है सब कसर निकाल दूँगा।

तब पुरोहितजी चुप रहे और जाटजी गाय बछड़ा ले अपने घर पहुँचा।

शिवदत्त—पशु पक्षियों को खिलाना चाहिये या नहीं।

स्वामीजी—चौथा महायज्ञ है 'भूत यज्ञ'। भूत का अर्थ है जीवित प्राणी गाय, कुत्ता, चौकीदार तथा अन्य जीव या मनुष्य जो हमारी सेवा करते हैं, इनको अपने भोजन का कुछ भाग देना चाहिये।

ऐसे प्राणियों को खिलाने से कोई लाभ नहीं जो हमारे सामान उठा ले जायं या लोगों को कष्ट पहुँचावें। जैसे तीर्थों के बन्दर। भारतवर्ष के बहुत से नगरों में लोग बन्दरों को खाना देते हैं। यह बन्दर इतने शरीर हो जाते हैं कि लोगों के जूते, टोपी, रोटी आदि ले जाते हैं। कहीं कहीं मकानों की खपरैल तोड़ देते हैं। लोग समझते हैं कि बन्दर हनुमान जी की सन्तान हैं अतः इनको दण्ड नहीं देना चाहिये। यह भ्रांति है। प्रथम तो बन्दर हनुमान जी की सन्तान नहीं। दूसरे यदि कोई रामचन्द्र जी के वंश का चोरी करे तो आप उसे दण्ड दिलायेंगे या योंही छोड़ देंगे। जब आप राम की सन्तान

को क्षमा नहीं करते तो हनुमान की सन्तान की दुष्टता को क्यों न रोका जाय ?

शिवदत्त—भूत प्रेत से तो हम लोग दूसरा अर्थ समझते हैं। बहुत से मनुष्य मर कर भूत हो जाते हैं और वे हमें हानि पहुँचाते हैं।

स्वामी जी—जनता में भूत प्रेत के बारे में बहुत सी बातें कही जाती हैं। ये सब ऊट पटांग हैं।

इस सम्बन्ध में याद रक्खो कि भूत का अर्थ मरा हुआ भूत प्रेत नहीं है। भूत का अर्थ है प्राणी। जैसा वेद में आया है कि सब भूतों को मित्र की दृष्टि से देखो।

इसी को बलि वैश्वदेव यज्ञ भी कहते हैं। 'बलि' का अर्थ मारना नहीं है। बलि का अर्थ है 'भोजन।' बलि वैश्वदेव का अर्थ है उन प्राणियों को भोजन देना जो हमारे आश्रित हैं।

पाँचवाँ महा यज्ञ है 'अतिथि यज्ञ।' अतिथि कहते हैं साधु महात्माओं को जो बिना तिथि नियत किये हमारे घरों में आ जाते हैं। गृहस्थ को चाहिये कि ऐसे महात्माओं का आदरपूर्वक सत्कार करें। इससे एक तो साधु महात्माओं पर श्रद्धा होती है और अपने भीतर सत्य के लिये प्रेम होता है। दूसरे इनके उपदेशों से हमारा आचार सुधरता है।

इनके अतिरिक्त और बड़े बड़े यज्ञ भी हैं। जो विद्वान् पण्डितों की सहायता से किये जाते हैं। यहाँ उनका वर्णन नहीं किया जाता।

शिवदत्त—संस्कार किसे कहते हैं? इनसे मनुष्य का क्या कल्याण होता है?

स्वामी जी—संस्कार उस कृत्य का नाम है जो मनुष्य की आयु के भिन्न भिन्न भागों में उसकी उन्नति के के लिये किया जाता है।

हमारे शास्त्रों में लिखा है कि हर स्त्री पुरुष को आयु भर में सोलह संस्कार करने चाहिये :—

गर्भाधान संस्कार, पुंसवन संस्कार, सीमन्तोनयन संस्कार—यह ३ जन्म से पूर्व। जात कर्म संस्कार, नाम करण संस्कार, निष्क्रमण संस्कार, अन्न प्राशन संस्कार, मुण्डन सस्कार, कर्णवेध संस्कार—यह ६ बालकपन में। उपनयन और वेदारम्भ संस्कार विद्या के आरम्भ में—यह २ कुछ बड़ा होने पर। समावर्तन और विवाह—यह २ शिक्षा के उपरान्त। वानप्रस्थ और सन्यास संस्कार—यह गृहस्थाश्रम के पश्चात् वृद्धावस्था में। अन्त्येष्टि संस्कार—मरने के पश्चात्।

इनका विधान ऋषि दयानन्द की लिखी हुई 'संस्कार विधि' नामक पुस्तक में देखिये।

इन सब में हवन होता है और इष्ट मित्रों को इकट्ठा किया जाता है। यहाँ चार संस्कारों का मुख्यतः वर्णन किया जाता है।

(१) नामकरण संस्कार—जन्म से ११वें, १००वें या ३६०वें दिन करना चाहिये। नाम सुन्दर और सार्थक रखना चाहिये। घसीटा आदि नाम मत रक्खो।

(२) उपनयन संस्कार—जिसको यज्ञोपवीत या जनेऊ कहते हैं। हवन के पश्चात् गुरु जनेऊ देता है और गायत्री का उपदेश करता है। विद्या पढ़ाना उसी दिन से शुरू हो जाता है।

(३) विवाह संस्कार—लड़की का १६ वर्ष और लड़के का २५ वर्ष की आयु से पहले नहीं होना चाहिये। वर वधू योग्य और स्वस्थ होने चाहिये। अत्यन्त बालक या बुड्ढे का विवाह न होना चाहिये। विवाह में दहेज न लेना चाहिये। न आतिशबाजी या नाच आदि कराना चाहिये। विवाह में जो वर वधू प्रतिज्ञायें करते हैं उनको ध्यान से सुनना चाहिये। और उस पर कार्य करना चाहिये।

(४) अन्त्येष्टि संस्कार—मरने पर लाश को चन्दन, घी, सामग्री आदि के साथ जलाना चाहिये।

पिंड नहीं देना चाहिये, न मरने वाले के लिये श्राद्ध

या तर्पण करना चाहिये। घर में हवन करके गृह शुद्धि अवश्य करनी चाहिये।

भजन

आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ॥१॥
मन्दिरों में, कन्दरों में, पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ सौ बार मुनिवर धन्यवाद ॥२॥
करते हैं जङ्गल में मङ्गल पक्षीगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ॥३॥
कुएँ में, तालाब में, सिन्धु की गहरी धार में।
प्रेम-रस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद ॥४॥
शादियों में, जलसों में, यज्ञ और उत्सव आदि में।
मीठे स्वर से चाहिये करें नारी-नर सब धन्यवाद ॥५॥
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वर स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता कान धर धर धन्यवाद ॥६॥

आठवीं कथा

राष्ट्र-सेवा-विचार

आज कथा का आठवाँ दिन है। भजन के उपरान्त स्वामी जी ने उपदेश देना शुरू किया।

भजन

जिसकी रज में लोट-पोटकर बड़े हुये हैं;
घुटनों के बल सरक-सरक कर खड़े हुये हैं।
परमहंस सम बाल्यकाल में सब सुख पाये,
जिसके कारण धूल भरे हीरे कहलाये॥
हम खेले कूदे हर्ष युत, जिसकी प्यारी गोद में।
हे मातृभूमि! तुमको निरख, मग्न क्यों न हों मोद में॥
पाकर तुझसे सभी सुखों को हमने भोगा,
तेरा प्रत्युपकार कभी क्या हमसे होगा?
तेरी ही यह देह तुझी से बनी हुई है,
बस तेरे ही सुयस सार से सनी हुई है॥
हा! अन्त समय तूही इसे, अचल देख अपनायगी।
हे मातृभूमि! यह अन्त में, तुझमें ही मिल जायगी॥

स्वामी जी—धर्मप्रेमियों ! हमारा देश भारतवर्ष है इसमें रहने वालों का नाम 'आर्य' है। 'आर्य' का अर्थ है श्रेष्ठ। हम सबको 'आर्य' बनना चाहिये। हमारा नाम 'हिन्दू' नहीं है। विदेशियों ने घृणा से हमारा नाम हिन्दू रक्खा। हमको अपने आपको 'आर्य' कहना चाहिये।

प्राचीन आर्य जाति सब देशों की गुरु थी। यहीं के विद्वान लोग दूसरे देशों में धर्म का प्रचार करते थे। हम को भी ऐसा करना चाहिये।

हमारा धर्म 'वैदिक' है। हम वेदों के मानने वाले हैं। प्राचीन काल में समस्त संसार का धर्म 'वैदिक' था। हमको भी ऐसा ही उद्योग करना चाहिये कि मिथ्या अवैदिक धर्मों को छोड़कर संसार के लोग सत्य सनातन वैदिक धर्म को ग्रहण करें और प्रेमपूर्वक शान्ति से रहें।

राष्ट्र की उन्नति के लिये इतनी चीजें आवश्यक हैं :—

(१) देश में एक वैदिक धर्म हो जिससे मतमतान्तर के झगड़े न रहें।

(२) सब लोग देश को स्वतंत्र रखने के लिये संगठन करें, स्वार्थ छोड़कर देश की सेवा करें।

(३) देश में सब नर नारी विद्या पढ़ें और अपने धर्म को पहचानें जिससे द्वेष न बढ़े। और कोई विदेशी चढ़ाई न कर सके।

(४) देशी वस्तुओं का प्रयोग करें। देश में खेती अधिक हो जिससे देश भर में कोई भूखा न मर सके। देश में कला कौशल का प्रचार हो जिससे सुई आदि छोटी चीजों से लेकर हवाई जहाज पर्यन्त सब कलें और आवश्यक चीजें हमारे देश की बनी हुई होवें। हमको किसी चीज को खरीदने के लिये अपना धन बाहर न भेजना पड़े।

(५) युद्ध का समस्त सामान देश में बने जिससे कोई शत्रु आक्रमण न कर सके।

(६) पानी के जहाज और हवाई जहाज बना कर देश के लोग देश देशान्तर में जावें और व्यापार की वृद्धि करें।

(७) हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी है। इसी को आर्य भाषा कहते हैं। यह भाषा संसार की सब भाषाओं में श्रेष्ठ है। इसकी लिपि नागरी है। हर भारतवासियों को चाहिये कि हिन्दी और नागरी की उन्नति के लिये कोशिश करें।

(८) हमारे धर्म शास्त्रों की भाषा संस्कृत है। इसलिये हमको संस्कृत पढ़नी चाहिये। जिससे हम वेद, मनुस्मृति रामायण, महाभारत, गीता आदि को समझ सकें।

(९) भारत की जनता मुख्यतः गाँवों में रहती है। आर्य्यों को चाहिये कि गाँवों को शुद्ध और सुन्दर

बनावें। सड़कों, पाठशालाओं, अस्पतालों का ठीक ठीक प्रबन्ध करें।

(१०) गांवों में पंचायतें होनी चाहिये। पंचायतों के सभासदों को धर्मात्मा, न्यायकारी और सच्चा होना चाहिये। पक्षपात किसी के साथ नहीं करना चाहिये। जहाँ पंचायतों का काम ठीक चलता है वहाँ 'स्वराज्य' प्रबल हो जाता है। और बाहर से किसी विदेशी को आक्रमण करने का साहस नहीं होता।

(११) गाँवों में गाय, भैंस, बकरी, भेड़ आदि चरने के लिये अच्छा प्रबन्ध होना चाहिये। पशुओं को मारकर खाने की प्रथा बन्द होनी चाहिये। दूध दही का प्राचुर्य होना चाहिये जिससे नरनारी तन्दुरुस्त हों।

(१२) किसी गाँव में बूचड खाने नहीं होने चाहिये। न किसी को कसाई गीरी का काम करना चाहिये। जहाँ कहीं कसाई जाति के लोग रहते हों उनको प्रेरणा करनी चाहिये कि खेती बाड़ी करके अपना पालन करें। पशुओं की हिंसा करके अपने लोक परलोक को न बिगाड़ें।

(१३) चमड़े का प्रयोग घटाना चाहिये। चमड़े के लिये किसी जानवर को न मारना चाहिये। जो पशु अपनी मौत मर जायं उनके चमड़े का प्रयोग करना चाहिये।

(१४) गाँवों में तमाखू, अफीम आदि की खेती बन्द करनी चाहिये। जिससे लोगों में नशा करने की बुरी आदत न हो। नशा तन को भी बिगाड़ता है और मन को भी। गाँजा, चरस आदि की प्रथा को बन्द करना चाहिये।

(१५) गाँव के लोग अनाथ, विधवा और निर्धनों की परस्पर मदद करें और अपने आचार व्यवहारों को ठीक रक्खें।

(१६) जब देश पर विपत्ति आवे तो देश भर के लोग मिल कर उसकी रक्षा करें।

(१७) हर नर-नारी में देश और जाति के लिये प्रेम और अभिमान होना चाहिये।

(१८) गाँवों में अखाड़े होने चाहिये। जहाँ गाँव के युवक अनेक प्रकार के अच्छे खेल खेलकर वीर बन सकें।

(१९) लोगों को शस्त्र विद्या सीखनी चाहिये। जिससे देश की सेना में भरती होकर समय पर देश की रक्षा कर सकें।

(२०) अपनी सभ्यता और संस्कृति की रक्षा करनी चाहिये।

———

नवीं कथा

गाय की महिमा

आज स्वामी जी महाराज ने गाय की महिमा पर व्याख्यान देने को कहा था। इस विषय पर सुनने के लिये लोग बहुत ही उत्सुक थे क्योंकि गोरक्षा की पुकार चारों ओर से उठ रही थी।

भजन

सबकी पालनहारी, है गाय हमें अति प्यारी ॥
नृप दलीप, श्रीकृष्ण मुरारी, अर्जुन भीमसेन बलधारी।
थे गौ भक्त पुजारी, है गाय हमें अति प्यारी ॥१॥
चरती घास नीर पी लेती, हमको मधुर दूध है देती।
अमृत सम गुणकारी, है गाय हमे अति प्यारी ॥२॥
सिख, मुस्लिम, हिन्दू, ईसाई, करती सबकी सदा भलाई।
महिमा इसकी न्यारी, है गाय हमे अति प्यारी ॥३॥
उपकारी माता से बढ़ कर, उसी गरीब गाय के तन पर।
चलती तेज कटारी, है गाय हमें अति प्यारी ॥४॥
रहा नहीं अब राज विदेशी, अब तो है सरकार स्वदेशी।
फिर क्यों गौ-वध जारी, है गाय हमें अति प्यारी ॥५॥

प्रबल विरोध 'प्रकाश' करेंगे, गो हत्या होने नहीं देंगे।
है यह टेक हमारी, है गाय हमें अति प्यारी ॥६॥

स्वामी जी—प्यारे गोरक्षको! वेदों में गाय की बहुत बड़ी महिमा बताई गई है! आर्य जाति में परम्परा से गाय की पूजा की परिपाटी है। क्योंकि गाय का दूध पीकर हम उसी प्रकार अपना जीवन लाभ करते हैं जैसे माता का दूध पीकर? इस लिये गाय हमारी माता है। ऋग्वेद के छठे मण्डल में एक पूरा का पूरा (२८ वाँ) सूक्त गाय की महिमा को बताता है। हम उसका अर्थ देते हैं:—

ऋग्वेद मण्डल ६, सूक्त २८

(मंत्र १)

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः।

(गावः आ अग्मन्) गायें आवें (उतभद्रं अक्रन्) और हमारा कल्याण करें। (सीदन्तु गोष्ठे) गोशाला में रहें। (रणयन्तु अस्मे) हमारे बीच में रम जावें। (प्रजावतीः) बच्चों वाली (पुरुरूपा) सुन्दर (इह) हमारे घर में (स्युः) होवें। (इन्द्राय) परमेश्वर की आज्ञा पालनार्थ यज्ञ में (पूर्वीः उषसः) बहुत सवेरे (दुहानाः) दुही जाकर।

भावार्थ—गृहस्थ लोगों को चाहिये कि वह घरों में गायें

पालें क्योंकि गाय से मनुष्य जाति का बड़ा लाभ है, गायों को उत्तम गोशालाओं में रखना चाहिये। उनको ऐसे आराम से रक्खा जाय कि वह घर में परिवार वालों के साथ रम जायें। उनको कोई कष्ट न हो। उनके बछिया बछड़े बहुत हों और उनकी ऐसी सेवा की जाय कि उनका शरीर सुन्दर दिखाई पड़े प्रातःकाल उनको दुहकर उनके दूध, घी आदि से यज्ञ किया जावे।

(मंत्र २)

इन्द्रो यज्वने पृणते च शिक्षत्युपेद् ददाति न स्वं मुषायति।
भूयोभूयो रयिमिदस्य वर्धयन्नभिन्ने खिल्ये निदधाति देवयुम्।

(इन्द्रः) परमेश्वर (यज्वने पृणते) यज्ञ करने वाले उपासक के लिये (शिक्षति च) बहुत शक्ति देता है। (उप इद् ददाति) उसको सब चीजें देता है, (न स्व मुषायति) उसके माल का नाश नहीं होने देता। (भूयः भूयः) बार बार (रयि इत् अस्य) इसके धन को (वर्धयन्) बढ़ाते हुये (देवयुम) ईश्वर के प्यारे को (अभिन्ने खिल्ये) सुरक्षित स्थान में (निदधाति) रखता है।

भावार्थः—जो लोग गायों को पालकर उनके घी से यज्ञ करते और उपासना करके ईश्वर को प्रसन्न करते हैं उनको ईश्वर सब कुछ देता है और उनके किसी माल का नाश नहीं होने देता। उनके धन को सदा बढ़ाता है। और उपासक को ऐसे सुरक्षित स्थान में रखता है कि उसकी किसी प्रकार हानि नहीं होती।

(मंत्र ३)

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो
व्यथिरा दधर्षति । देवांश्च याभिर्यजते ददाति
च ज्योगित् ताभिः सचते गोपतिः सह ॥

(न ता नशन्ति) उन गायों का नाश न हो (न दभाति तस्करः) कोई चोर उनको न चुरावे । (अमित्रः आसाम् व्यथिः न आदधर्षति) शत्रु उनके ऊपर कोई शस्त्र न चलावे । (गोपतिः) गायों का स्वामी यजमान या गृहस्थ (याभिः) जिन गायों की सहायता से (देवान च यजते) विद्वानों की सेवा करता है (ददाति च) और दान देता है ताभिः सह) उनके साथ (ज्योक इत् सचते) बहुत दीर्घकाल तक सुखी रहता है । •

भावार्थः—गायों को इस प्रकार रक्खा जाय कि उनका नाश न हो । न कोई चोर ले जाय न शत्रु आक्रमण करे । गृहस्थों को चाहिये कि वे गायों के दूध, घी, आदि पदार्थों से विद्वान् की सेवा सत्कार करे । उनका गाये दान मे भी देवे । गोपूजा और यज्ञों के शुभ कर्मों का फल यह होगा कि उनको बहुत दिनों तक सुख और आनन्द का जीवन लाभ होगा । जहाँ गाये कष्ट मे रहती हैं वहाँ दूध दही नहीं होता । लोग यज्ञ भी नहीं कर सकते । उनके शरीर दुर्बल हो जाते है और उनके आत्मा का विकास नहीं होने पाता ।

(मंत्र ४)

न ता अर्वा रेणुककाटो अश्नुते न संस्कृतत्र मुपयन्ति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अनु गावो।
मर्तस्य वि चरन्ति यज्वनः।

(न ता अर्वा रेणुककाटः अश्नुते) शत्रु का धूल उड़ाता हुआ घोड़ा इन गायों पर धावा न बोले। (न संस्कृतत्रं उपयन्ति ता अभि) न कोई उनको मारने के लिये बूचड़खानों में ले जावे। (तस्य यज्वनः मर्तस्य) उस यज्ञ करने वाले मनुष्य की (ताः गावः) वे गाये (उरुगाय) विस्तृत चोड़े चकले (अभयं) भय रहित स्थानों में (विचरन्ति) विचरा करें।

भावार्थः—ऐसा न हो कि कोई दुश्मन अपने घोड़े दौड़ाता और धूल उड़ाता आकर हम पर चढ़ाई कर दे। या हमारी गायों को बूचड़खानों में ले जाकर काट डाले। यज्ञ करने लाले मनुष्यों को चाहिये कि गायों को विचरने के लिये लम्बे चौड़े मैदान छोड़ें जिनमे वह बिना भय के स्वतंत्रता से विचर सकें। जो गायें दिन रात खूंटे पर बंधी रहती हैं उनके शरीर दुर्बल हो जाते हैं और उनके दूध घी में भी वह शक्ति नहीं रहती जिससे पीने वालों को पूरा लाभ हो सके। तन्दुरुस्त गायों के लिये भोजन भी अच्छा हो और विचरने के लिये मैदान भी बड़े हों।

(मंत्र ५)

गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।

इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्।

(गावः भगः) गायें भाग्य को देने वाली हैं। (गावः इन्द्रः) गायें इन्द्र अर्थात् शक्ति देने वाली हैं। (मे) मेरे लिये (अच्छान्) प्राप्त होवें। (गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः) सोम की पहली आहुति में गाय का दूध ही प्रयोग में आता है। अर्थात् सोमरस में गाय का दूध मिलाकर आहुति दी जाती है। (जनासः) हे दुनियां के लोगों। (इमा या गावः) यह जो गायें हैं (स इन्द्र) वह साक्षात् इन्द्र का रूप है। अर्थात् इनसे शक्ति मिलती है। (हृदा मनसा) मैं जी जान से (इन्द्रम्) इस शक्ति को (इच्छामि) चाहता हूँ।

भावार्थः—गायें भगवती हैं। इनसे मानव जाति का भाग्य खुलता है। गायें इन्द्र हैं। अर्थात् इनसे मनुष्य शक्ति वाला हो जाता है। यज्ञों में गाय के घी दूध से ही आहुतियां दी जाती हैं। हे दुनियां के लोगों याद रक्खो कि तुमको ठीक ठीक बल गायों से प्राप्त होगा। मैं इसी गाय रूपी इन्द्र शक्ति को हृदय से और मन से चाहता हूँ। जो गाय की वृद्धि करते हैं। उनकी भी वृद्धि होती है।

(मंत्र ६)

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित् कृणुथासुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद् वो वय उच्यते सभासु ॥

(गावः) हे गायो (यूयं मेदयथ) आप प्रसन्न हूजिये। (कृशं चित्) दुबले पतले (अश्रीरम् चित्) अश्लील अर्थात् बेडाल शरीर को (सुप्रतीकम् कृणुथ) सुडौल बनाइये। (भद्रवाचः) हे प्यारी बोली बोलने वाली, रंभाने वाले गायो (गृहं भद्रं कृणुथ) हमारे घर को सुन्दर बना दो। (सभासु) सभाओं या यज्ञस्थानों मे (वः वयः) तुम्हारा दिया हुआ घी दूध रूपी अन्न (बृहद् उच्यते) बड़ी प्रशसा को प्राप्त होता है।

भावार्थः—गायें प्रसन्न और हृष्ट पुष्ट रहेंगी तो मनुष्यों के शरीर भी हृष्ट पुष्ट और सुन्दर होंगे। जिन घरों मे गायें प्रसन्नता पूर्वक रंभाती है उनके दूध घी रूपी हवियों की यज्ञ सभाओं में भी बड़ी प्रशंसा होती है।

(मंत्र ७)

प्रजावतीः सूयवसं रिशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रूद्रस्य वृज्याः ॥

(प्रजावतीः) गायें सन्तान वाली हों (सूयवसं रिशतीः) अच्छा घास भूसा खायें। (शुद्धा अपः) शुद्ध जलों को (सुप्रपाणेः) अच्छे घाटों पर (पिबन्तीः) पिया करे। (मा वः स्तेन ईशत) चोर तुमको

बस में न कर सके (या अघशंसः) हत्यारा तुमको न सता सके। (रूद्रस्य हेतिः) परमात्मा का कोप (वः) तुमको (परिवृज्याः) अपने शासन में न ला सके।

भावार्थः--गायों को अच्छा खाना देना चाहिये। उनके पानी पीने के लिये अच्छे घाट होने चाहिये। चोर उनको चुरा न सके। हत्यारे उनको सता न सके। ईश्वर के कोप से वे सुरक्षित रहें तो उनकी सन्तान भी बहुत होगी और मनुष्यों को उनके दूध घी बछड़ों आदि से लाभ भी अधिक होगा।

(मंत्र ८)

उपेदमुपपर्चनमासु गोषूप पृच्यताम्
उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्य ॥

(आसु गोषु) इन गायों को (उपपर्चनम् पृच्यताम्) भोजन बहुत अच्छा मिले। (उप ऋषभस्य रेतसि) बैल पुष्ट हों जिनके योग से पुष्ट बछड़े बछिया हों। (उप इन्द्र तव वीर्यं) हे ईश्वर आप का बल इनको प्राप्त हो।

भावार्थः—यदि गायों को अच्छा खाना मिलेगा और सांड अच्छे होंगे तो सन्तति अच्छी होगी। इन सबके लिये परमात्मा की कृपा भी बहुत जरूरी है। ईश्वर की दया के लिये शुभ कर्मों की जरूरत है। जो लोग ईश्वर की उपासना करते और शुभ कर्म करते हैं उनको गायों के द्वारा घी दूध अन्नादि का भी लाभ होता है।

दसवीं कथा

भ्रान्ति निवारण और कुरीति-प्रतिषेध

आज कथा का दसवाँ दिन था। इतने दिनों से कथा सुनते सुनते और धार्मिक बातों पर वार्तालाप करते करते लोगों की उत्सुकता बढ़ रही थी। हर एक मनुष्य चाहता था कि मैं शङ्का करूँ और स्वामी जी उसका उत्तर दें। स्वामी जी इस प्रकार लोगों को समझाते थे कि उन पर लोगों की श्रद्धा बढ़ती जाती थी।

भजन

वेदों का डंका आलम में बजवा दिया ऋषि दयानन्द ने।
हर जगह ओ३म् का झंडा फिर फहरा दिया ऋषि दयानन्द ने॥
अज्ञान अविद्या की चहुँदिश, धनघोर घटायें छाईं थीं।
कर नष्ट उन्हें जग में प्रकाश, फैला दिया ऋषि दयानन्द ने॥
सर पर तूफान बला का था, आँखों से दूर किनारा था।
बन कर मल्लाह किनारे पर, पहूँचा दिया ऋषि दयानन्द ने॥
घुस गये लुटेरे घर में थे, सब माल लूट कर ले जाते।
सोतों का हाथ पकड़ कर फिर बिठला दिया ऋषि दयानन्द ने॥

मक्कारी ढोंग प्रपञ्चों से, जो माल मुफ्त का खाते थे।
सब पोल खोल कर दिल उनका दहला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥
कब्रों पर सर को पटकते थे, काशी काबे मे भटकते थे।
दे ज्ञान उन्हें मुक्ती का मार्ग, दिखला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥
जो चीख चीख कर आठ पहर, करते थे निन्दा वेदों की।
सर उनका वेदों के आगे झुकवा दिया ऋषि दयानन्द ने ॥
सब छोड़ चुके थे धर्म कर्म, गौरव गुमान ऋषि मुनियों का।
फिर सन्ध्या हवन यज्ञ करना, सिखला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥
विद्यालय गुरुकुल खुलवाये, कायम हर जगह समाज किये।
आदर्श पुरातन शिक्षा का, बतला दिया ऋषि दयानन्द ने ॥
बलिदान किया बलिवेदी पर, जीवन प्रकाश हँसते हँसते।
सच्चे नेता बन कर सबको, चेता दिया ऋषि दयानन्द ने ॥

श्रोताओं में एक पण्डित जी थे जिनका नाम था अनोखेलाल। वे कुछ कुछ पुराने विचारों के पुरुष थे। जब सब लोग इकट्ठे हो गये तो पं० अनोखेलाल बोले :--

स्वामीजी महाराज! आप कहते तो ठीक हैं। परन्तु एक बात है। हम देखते हैं कि जब से आर्य्य समाज स्थापित हुआ है लोगों की श्रद्धा जाती रही है। न गंगा जी को मानें, न देवी देवतों को, न पितरों को। यदि ऐसा ही रहा तो लोग अश्रद्धालु और नास्तिक हो जायंगे और पुराने रीति रिवाज समाप्त हो जायंगे।

स्वामीजी—पण्डित अनोखेलाल जी! आपने इतना

उपदेश सुना। उसका आप पर यही प्रभाव पड़ा। आप जानते हैं कि श्रद्धा किसको कहते हैं?

कल्याणचन्द्र—हाँ! महाराज। आज यह समझाइये कि श्रद्धा किसको कहते हैं।

स्वामी जी—देखो भाई! श्रद्धा (श्रत्+धा) का अर्थ है सत्य पर विश्वास करना। झूठी बातों पर विश्वास करने को श्रद्धा नहीं कहते। इसका नाम हैं अन्ध विश्वास। गंगा स्नान मात्र से मुक्ति नहीं हो सकती। मूर्ति पूजन से ईश्वर नहीं मिलता। मरे पितरों को कोई भोजन नहीं पहुँचा सकता। जो इन झूठी बातों पर विश्वास करता है। वह श्रद्धालु नहीं है अपितु अन्ध विश्वासी है। अन्धा मनुष्य साँप को रस्सी समझकर पकड़ ले तो साँप उसको अवश्य काट लेगा। इसलिये केवल सच्ची बातों पर श्रद्धा करनी चाहिये। झूठी बातों पर नहीं।

रामचन्द्र—स्वामी जी यह तो आपने नई बात कही। श्रद्धा करना भी कहीं बुरा हो सकता है।

स्वामी जी—हाँ भाई! झूठी बातों पर श्रद्धा करना बुरा है। वेद में लिखा है :—

अश्रृधामनृते दधात् श्रद्धां सत्ये प्रजापति :—

(यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ७७)

परमात्मा का उपदेश है कि "झूठ" में अश्रद्धा

करो और सत्य में श्रद्धा। जो मनुष्य सत्य में अश्रद्धा करता है और असत्य में श्रद्धा, वह अपने आप तो डूबता ही है संसार को भी डुबो मारता है। आजकल के ढोंगी आदमी लोगों को 'श्रद्धा' 'श्रद्धा' कहकर ठगते फिरते हैं, इनसे बचना चाहिये। तुम देखते नहीं कि हमारे घरों में स्त्री पुरुष कैसी कैसी कुरीतियों में फँसे हुये हैं और इस से जाति का सत्यानाश हो रहा है।

शिवदत्त—'कुरीति' किसे कहते हैं?

स्वामीजी—देखो भाई! जो आदमी अज्ञान से कोई खोटा कर्म करता है उसको मूर्खता कहते हैं। परन्तु यदि कोई जाति या बहुत से लोग अज्ञानवश कुछ का कुछ करने का रिवाज डाल लेते हैं तो उसको कुरीति कहते हैं। जैसे बच्चों के विवाह का रिवाज कुरीति है। दिवाली पर 'जुआ' खेलना इस डर से कि जो दिवाली पर 'जुआ' नहीं खेलता उसका अगला जन्म छछूंदर का होगा यह कुरीति है। सूरज या चाँद ग्रहण के समय खाना खाने से डरना यह कुरीति है। ऐसी सैकड़ों कुरीतियां संसार में फैली हुई हैं।

रामचन्द्र—और कौन कौन सी कुरीतियाँ हैं और यह कैसे पैदा होती हैं?

स्वामी जी—कुरीतियों का कारण भ्रान्ति या अज्ञान है। अज्ञानी लोग वैद्यकशास्त्र वा पदार्थ विद्या के पढ़ने, सुनने

और विचार रहित होकर सन्निपात ज्वरादि शारीरिक और उन्माद आदि मानस रोगों का नाम भूत प्रेतादि धरते हैं। उनका औषध सेवन और पथ्यादि उचित व्यवहार न करके उन धूर्त, पाखंडी, महामूर्ख, अनाचारी, स्वार्थी, लोगों पर विश्वास कर के अनेक प्रकार के ढोंग, छल, कपट और उच्छिष्ट भोजन डोरा, धागा आदि मिथ्या मन्त्र-यन्त्र बांधते बंधवाते फिरते हैं। अपने धन का नाश, सन्तान आदि की दुर्दशा और रोगों को बढ़ा कर दुःख देते फिरते हैं। जब आंख के अंधे और गांठ के पूरे उन दुर्बुद्धि पापी स्वार्थियों के पास जाकर पूछते हैं कि "महाराज ! इस लड़का, लड़की, स्त्री और पुरुष को न जाने क्या हो गया है ?" तब वे बोलते हैं कि "इसके शरीर में बड़ा भूत, प्रेत, भैरव, शीतला आदि देवी आ गई है जब तक तुम इसका उपाय न करोगे तब तक ये न छूटेंगे और प्राण भी ले लेंगे। जो तुम मलीदा वा इतनी भेट दो तो हम मन्त्र जप पुरश्चरण से झाड़ के इनको निकाल दें।" तब वे अन्धे और उनके सम्बन्धी बोलते हैं कि "महाराज! चाहे हमारा सर्वस ले जाओ परन्तु इनको अच्छा कर दीजिये।" तब तो उनकी बन पड़ती है। वे धूर्त कहते हैं "अच्छा लाओ इतनी सामग्री, इतनी दक्षिणा, देवता को भेट और ग्रहदान कराओ।" झांझ, मृदङ्ग, ढोल, थाली लेके उसके सामने बजाते गाते और

उनमें से एक पखंडी उन्मत्त होके नाच कूद के कहता है "मैं इसका प्राण ही ले लूँगा।" तब वे अन्धे उसके पगों में पड़ के कहते हैं "आप चाहे सो लीजिये इसको बचाइये।" तब वह धूर्त बोलता है "मैं हनुमान हूँ, लाओ पक्की मिठाई, तेल, सिन्दूर, सवा मन का रोट और लाल लंगोट।" "मैं देवी वा भैरव हूँ, लाओ पांच बोतल मद्य, बीस मुर्गी, पांच बकरे, मिठाई और वस्त्र।" जब वे कहते हैं कि "जो चाहो सो लो" तब तो वह पागल बहुत नाचने कूदने लगता है। परन्तु जो कोई बुद्धिमान् उनकी भेंट पांच जूता, दंडा व चपेटा लात मारे तो उसके हनुमान देवी और भैरव झट प्रसन्न होकर भाग जाते हैं, क्योंकि वह उनका केवल धनादि हरण करने के प्रयोजनार्थ ढोंग है।

और जब किसी ग्रहग्रस्त, ग्रहरूप, ज्योतिर्विदाभास के पास जाके वे कहते हैं "हे महाराज! इसको क्या है? तब वे कहते हैं कि "इस पर सूर्यादि क्रूर ग्रह चढ़े हैं। जो तुम इनकी शान्तिपाठ पूजा, दान कराओ तो इसको सुख हो जाय, नहीं तो बहुत पीड़ित होकर मर जाय तो भी आश्चर्य नहीं।"

लोगों को सोचना चाहिये कि जैसी यह पृथ्वी जड़ है वैसे ही सूर्यादि लोक हैं वे ताप और प्रकाशादि से भिन्न

कुछ भी नहीं कर सकते। क्या वे चेतन हैं जो क्रोधित होके दुःख और शांत होके सुख दे सकें?

(प्रश्न) क्या जो यह संसार में राजा प्रजा सुखी-दुखी हो रहे हैं यह ग्रहों का फल नहीं है।

(उत्तर) नहीं; ये सब पाप पुण्यों के फल हैं।

(प्रश्न) तो क्या ज्योतिःशास्त्र झूठा है?

(उत्तर) नहीं, जो उसमें अङ्क बीज, रेखागणित विद्या है वह सब सच्ची जो फल की लीला है वह सब झूठी है।

(प्रश्न) क्या जो यह जन्मपत्र है सो निष्फल है।

(उत्तर) हाँ वह जन्मपत्र नहीं किन्तु उसका नाम 'शोकपत्र' रखना चाहिये, क्योंकि जब सन्तान का जन्म होता है तब सबको आनन्द होता है परन्तु वह आनन्द तब तक होता है कि जब तक जन्मपत्र बन के ग्रहों का फल न सुनें। जब पुरोहित जन्मपत्र बनाने को कहता है तब उसके माता पिता, पुरोहित से कहते हैं "महाराज! आप बहुत अच्छा जन्मपत्र बनाइये।" जो धनाढ्य हो तो बहुत सी लाल पीली रेखाओं से चित्र विचित्र और निर्धन हो तो साधारण रीति से जन्मपत्र बना के सुनाने को आता है। तब उसका मां बाप ज्योतिषी जी के सामने बैठ के कहते हैं "इसका जन्मपत्र अच्छा तो है?" ज्योतिषी कहता है "जो है सुना देता हूँ। जन्मग्रह बहुत अच्छे और मित्र-ग्रह भी बहुत अच्छे हैं जिनका फल धनाढ्य और प्रतिष्ठा

वान् होता है। जिस सभा में जा बैठेगा तो सबके ऊपर इसका तेज पड़ेगा, शरीर से आरोग्य और राज्यमानी होगा।" इत्यादि बातें सुनके पिता आदि बोलते हैं "वाह वाह ज्योतिषीजी आप बहुत अच्छे हो।" ज्योतिषीजी समझते हैं। इन बातों से कार्य सिद्ध नहीं होता। तब ज्योतिषी बोलता है कि "यह ग्रह तो बहुत अच्छे हैं परन्तु ये ग्रह क्रूर हैं अर्थात् फलाने-फलाने ग्रह के योग से ८ वर्ष में इसका मृत्युयोग है।" इसको सुनके माता पितादि पुत्र के जन्म के आनन्द को छोड़ के, शोकसागर में डूबकर ज्योतिषीजी से कहते हैं कि "महाराजजी! अब हम क्या करें?" तब ज्योतिषीजी कहते हैं "उपाय करो।" गृहस्थ पूछें "क्या उपाय करें?" ज्योतिषी जी प्रस्ताव करने लगते हैं कि 'ऐसा-ऐसा दान करो। ग्रह के मंत्र का जप कराओ और नित्य ब्राह्मणों को भोजन कराओगे तो अनुमान है कि नवग्रहों के विघ्न हट जायेंगे।" अनुमान शब्द इसलिये है कि जो मर जायगा तो कहेंगे हम क्या करें, परमेश्वर के ऊपर कोई नहीं है, हमने तो बहुत सा यत्न किया और तुमने कराया उसके कर्म ऐसे ही थे। और जो बच जाय तो कहते हैं कि देखो, हमारे मन्त्र, देवता और ब्राह्मणों की कैसी शक्ति है! तुम्हारे लड़के को बचा दिया। यहाँ यह बात होनी चाहिये कि जो इनके जप पाठ से कुछ न हो तो दूना तिगुने रुपये उन धूर्तों से ले लेने

चाहियें। और बच जाय तो भी ले लेने चाहियें क्योंकि जैसे ज्योतिषियों ने कहा कि "इसके कर्म और परमेश्वर के नियम तोड़ने का सामर्थ्य किसी का नहीं है" वैसे गृहस्थ भी कहें कि "यह अपने कर्म और परमेश्वर के नाम से बचा है तुम्हारे करने से नहीं" और तीसरे गुरू आदि भी पुण्यदान कराके आप ले लेते हैं तो उनको भी वही उत्तर देना, जो ज्योतिषियों को दिया था।

अब रह गई शीतला मन्त्र तन्त्र यन्त्र आदि। ये भी ऐसे ही ढोंग मचाते हैं। वे कहते हैं कि जो हम मन्त्र पढ़ के डोरा वा यन्त्र बना देवें तो हमारे देवता और पीर उस मंत्र यन्त्र के प्रताप से उसको कोई विघ्न नहीं होने देते।" इनको वही उत्तर देना चाहिये। कि क्या तुम मृत्यु, परमेश्वर के नियम और कर्म फल से भी बचा सकोगे? तुम्हारे इस प्रकार करने से भी कितने ही लड़के मर जाते हैं और क्या तुम मरण से बच सकोगे? तब वे कुछ भी नहीं कह सकते और वे धूर्त जान लेते हैं कि यहाँ हमारी दाल नहीं गलेगी इससे इन सब मिथ्या व्यवहारों को छोड़कर धार्मिक, सब देश के उपकारकर्त्ता, निष्कपटता से सबको विद्या पढ़ाने वाले, उत्तम विद्वान लोगों का प्रत्युपकार करना चाहिये। और जितनी लीला रसायन मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि करना कहते हैं उनको महापामर समझना चाहिये।

गुदरुत्त—स्वामी जी, तीर्थ यात्रा के विषय में आपकी क्या सम्मति है ?

स्वामी जी—आप तीर्थ का ठीक 'अर्थ' नहीं जानते। 'तीर्थ' का अर्थ है वह शुभ काम जिनके करने से मनुष्य भवसागर से तर जाय। विद्या पढ़ना तीर्थ है, ईश्वर की उपासना तीर्थ है। दान देना तीर्थ है। परोपकार करना तीर्थ है। जल स्थल सच्चे तीर्थ नहीं। यह तराने वाले नहीं किन्तु डुबो कर मारने वाले हैं। देखो प्रयाग के कुम्भ में ३ फरवरी १८५४ ई० को हज़ारों स्त्री पुरुष भेड़िया धसान में आकर मर गये। यह उनकी अविद्या थी कि पंडों के बहकाने में आकर ढोंगी साधुओं के दर्शन को चल पड़े। यदि तीर्थ का ठीक अर्थ समझते तो इस प्रकार कुत्ते की मौत नहीं मरते। आजकल बहुत से ढोंगी गुरु मूर्खों को चेला बनाते और झूठ झूठ मंत्र कान में फूंका करते हैं। इससे बचना चाहिये :—

लोभी गुरु लालची चेला दोनों खेलें दाव।
भवसागर में डूबते बैठ पथर की नाव॥

रामपदार्थ—और किसी भ्रान्ति के विषय में समझाइये—

स्वामी जी—देखो! ग्रहों का चक्र कैसा चलाया है कि जिसने विद्याहीन मनुष्यों को ग्रस लिया है "आकृष्णे-

नरजसा०" । १ । सूर्य का मन्त्र । "इमं देवा असपत्नं सुवध्वम्" । २ । चन्द्र । "अग्निमूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः०" ।३। मङ्गल । "उद्बुध्यस्वाग्ने०" ।४। बुध । "बृहस्पते अतिय दर्यो०" ।५। बृहस्पति । "शुक्रमन्धसः" ।६। शुक्र । शन्नो देवीरभिष्टय०" । ७ । शनि । "कया नश्चित्र आभुवः" । ८ । राहु । और "केतु" कृण्वन्नकेतवे०" । ९ । इसको केतु की कण्डिका कहते हैं ॥ (आकृष्णेन०) यह सूर्य और भूमि का आकर्षण । १ । दूसरा राजगुण विधायक । २ । तीसरा अग्नि । ३ । और चौथा यजमान । ४ । पाँचवां विद्वान् । ५ । छठा वीर्य अन्न । ६ । सातवां जल प्राण और परमेश्वर । ७ । आठवां मित्र । ८ । नववां ज्ञानग्रहण का विधायक मन्त्र है । ९ । ग्रहों के वाचक नहीं । अर्थ न जानने से भ्रमजाल में पड़े हैं ।

(प्रश्न) ग्रहों का फल होता है वा नहीं ?

(उत्तर) जैसा पोपलीला का है वैसा नहीं किन्तु जैसा सूर्य चन्द्रमा की किरण द्वारा उष्णता शीतता अथवा ऋतुवत्कालचक्र का सम्बन्धमात्र से अपनी प्रकृति के अनुकूल प्रतिकूल सुख दुःख के निमित्त होते हैं । परन्तु जो पोपलीला वाले कहते हैं, "सुनो महाराज सेठजी ! यजमानो ! तुम्हारे आज आठवां चन्द्र सूर्यादि क्रूर घर में आये हैं । अढ़ाई वर्ष का शनैश्चर पग में आया है । तुमको बड़ा विघ्न होगा । घर द्वार छुड़ाकर परदेश में

घुमावेगा। परन्तु जो तुम ग्रहों का दान, जप, पाठ, पूजा कराओगे तो दुःख से बचोगे।" इनसे कहना चाहिये। कि सुनो पुरोहितजी! तुम्हारा और ग्रहों का क्या सम्बन्ध है? ग्रह क्या वस्तु है?

पोप जी—

दैवाधीनं जगत्सर्वं मन्त्राधीनाश्च देवताः।
ते मन्त्रा ब्राह्मणाधीनास्तस्माद् ब्राह्मणदैवतम्॥

देखो कैसा प्रमाण है। देवताओं के आधीन सब जगत्, मन्त्रों के आधीन सब देवता और वे मन्त्र ब्राह्मणों के आधीन हैं। इसलिये ब्राह्मण देवता कहाते हैं। क्योंकि चाहैं जिस देवता को मन्त्र के बल से बुला प्रसन्न कर काम सिद्ध कराने का हमारा ही अधिकार है। जो हम में मन्त्र शक्ति न होती तो तुम्हारे से नास्तिक हमको संसार में रहने ही न देते।

(सत्यवादी) जो चोर, डाकू, कुकर्मी लोग हैं वे भी तुम्हारे देवताओं के आधीन होंगे? देवता ही उनसे दुष्ट काम कराते होंगे? जो वैसा है तो तुम्हारे देवता और राक्षसों में कुछ भेद न रहेगा। जो तुम्हारे आधीन मन्त्र हैं उनसे तुम चाहो सो करा सकते हो तो उन मन्त्रों से देवताओं को वश कर राजाओं के कोष उठवाकर अपने घर में भरकर बैठ के आनन्द क्यों नहीं भोगते? घर-घर में शनैश्चरादि के तेल आदि छायादान लेने को

मारे-मारे क्यों फिरते हो ? और जिसको तुम कुवेर मानते हो उसको वश में करके चाहो जितना धन लिया करो। विचारे गरीबों को क्यों लूटते हो ? तुमको दान देने से ग्रह प्रसन्न और न देने से अप्रसन्न होते हों तो हमको सूर्य्यादि ग्रहों की प्रसन्नता अप्रसन्नता प्रत्यक्ष दिखलाओ। जिसको ८ वां सूर्य चन्द्र और दूसरे को तीसरा हो दोनों को ज्येष्ठ महीने में बिना जूते पहिने तपी हुई भूमि पर चलाओ। जिस पर प्रसन्न हैं उनके पग, शरीर न जलने और जिस पर क्रोधित हैं उनके जल जाने चाहिये तथा पौष मास में दोनों को नंगे कर पौर्णमासी की रात्रि भर मैदान में रक्खें। एक को शीत लगे दूसरे को नहीं तो जानों कि ग्रह क्रूर और सौम्यदृष्टि वाले होते हैं। और क्या तुम्हारे ग्रह सम्बन्धी हैं ? और तुम्हारी डाक व तार उनके पास आता जाता है ? अथवा तुम उनके वा वे तुम्हारे पास आते जाते हैं ? जो तुम में मन्त्रशक्ति हो तो स्वयं राजा व धनाढ्य क्यों नहीं बन जाओ ? वा शत्रुओं को अपने वश में क्यों नहीं कर लेते हो ? नास्तिक वह होता है जो वेद ईश्वर की आज्ञा वेदविरुद्ध पोपलीला चलावे। जब तुमको ग्रहदान न देवे जिस पर ग्रह है वही ग्रहदान को भोगे तो क्या चिन्ता है ? जो तुम कहो कि नहीं हम ही को देने से वे प्रसन्न होते हैं अन्य को देने से नहीं, तो क्या तुमने ग्रहों का ठेका ले लिया है ? जो

ठेका लिया हो तो सूर्य्यादि को अपने घर में बुला के जल मरो। सच तो यह है कि सूर्य्यादि लोक जड़ हैं। वे न किसी को दुःख और न सुख देने की चेष्टा कर सकते हैं किन्तु जितने तुम ग्रहदानोपजीवी हो वे सब तुम ग्रहों की मूर्तियाँ हो, क्योंकि ग्रह शब्द का अर्थ भी तुम में ही घटित होता है। "ये गृह्णन्ति ते ग्रहाः" जो ग्रहण करते हैं उनका नाम ग्रह है। जब तक तुम्हारे चरण राजा रईस सेठ साहूकार और दरिद्रों के पास नहीं पहुँचते तब तक किसी को नवग्रह का स्मरण भी नहीं होता, जब तुम साक्षात् सूर्य्य शनैश्चरादि मूर्त्तिमान् क्रूर रूप धर उन पर जा चढ़ते हो तब बिना ग्रहण किये उनको कभी नहीं छोड़ते और जो कोई तुहारे ग्रास में न आवे उसकी निन्दा नास्तिकादि शब्दों से करते फिरते हो।

(पोपजी) देखो! ज्योतिष का प्रत्यक्ष फल। आकाश में रहने वाले सूर्य्य चन्द्र और राहु केतु का संयोग रूप ग्रहण को पहले ही कह देते हैं। जैसा यह प्रत्यक्ष होता है वैसा ग्रहों का भी फल प्रत्यक्ष हो जाता है, देखो धनाढ्य दरिद्र, राजा, रङ्क, सुखी दुखी ग्रहों ही से होते हैं।

(सत्यवादी) जो यह ग्रहणरूप प्रत्यक्ष फल है सो गणितविद्या का है फलित का नहीं। जो गणितविद्या है वह सच्ची और फलितविद्या स्वाभाविक सम्बन्धजन्य को

छोड़ के झूठी है। जैसे अनुलोभ, प्रतिलोभ घूमनेवाले पृथिवी और चन्द्र के गणित से स्पष्ट विदित होता है कि अमुक समय, अमुक देश, अमुक अवयव में सूर्य वा चन्द्र ग्रहण होगा, जैसे—

छादयत्यर्कमिन्दुर्विधुं भूमिभाः ॥

यह सिद्धान्तशिरोमणि का वचन है और इसी प्रकार सूर्यसिद्धान्तादि में भी है अर्थात् जब सूर्य [और] भूमि के मध्य में चन्द्रमा आता है तब सूर्य ग्रहण और जब सूर्य और चन्द्र के बीच में भूमि आती है तब चन्द्र ग्रहण होता है। अर्थात् चन्द्रमा की छाया भूमि पर और भूमि की छाया चन्द्रमा पर पड़ती है। सूर्य प्रकाशरूप होने से उसके सन्मुख छाया किसी की नहीं पड़ती किन्तु जैसे प्रकाशमान सूर्य वा दीप से देहादि की छाया उल्टी जाती है वैसे ही ग्रहण में समझो। जो धनाढ्य, दरिद्र, प्रजा, राजा, रङ्क होते हैं वे अपने कर्मों से होते हैं ग्रहों से नहीं। बहुत ज्योतिषी लोग अपने लड़का लड़की का विवाह ग्रहों की गणित [विद्या] के अनुसार करते हैं पुनः उनमें विरोध व विधवा अथवा मृतस्त्रीक पुरुष हो जाता है। जो फल सच्चा होता है तो ऐसा क्यों होता? इसलिये कर्म की गति सच्ची और ग्रहों की गति सुख दुख भोग में कारण नहीं। भला ग्रह आकाश में और पृथिवी भी आकाश में बहुत दूर पर हैं इनका सम्बन्ध कर्त्ता और

कर्मों के साथ साक्षात् नहीं। कर्म्म और कर्म्म के फल कर्त्ता भोक्ता जीव और कर्मों के फल भोगानेहारा परमात्मा है। जो तुम ग्रहों का फल मानों तो इसका उत्तर देओ कि जिस क्षण में एक मनुष्य का जन्म होता है जिसको तुम ध्रुवा त्रुटि मानकर जन्मपत्र बनाते हो उसी समय में भूगोल पर दूसरे का जन्म होता है वा नहीं? जो कहो नहीं तो झूठ और जो कहो होता है तो एक चक्रवर्ती के सदृश भूगोल में दूसरा चक्रवर्ती राजा क्यों नहीं होता? हाँ, इतना तुम कह सकते हो कि यह लीला हमारे उदर भरने की है तो कोई मान भी लेवे।

रामपदार्थ—बच्चों के माता निकल आती है। यह क्या चीज़ है?

स्वामी जी—रोग को 'माता' कहना मूर्खता है। चेचक 'माता' नहीं रोग है। अतः उचित वैद्य का इलाज कराना चाहिये। समय पर बच्चों को टीका लगवाने से चेचक का ज़ोर कम हो जाता है। इससे डरना नहीं चाहिये। मूर्खों के पास दौड़ने और झाड़ फूंक करने से से कुछ नहीं होता। इसी प्रकार और रोग भी हैं जिनको देवी देवता समझकर अज्ञानी लोग धोखा खा जाते हैं। ऐसा करना उचित नहीं।

शिवदत्त—कुछ और कुरीतियाँ बताइये?

स्वामी जी—इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी

कुरीतियाँ हैं। यह सब भी अन्धविश्वास से फैलती है। मस्जिदों के नीचे हिन्दू लोग अपने बच्चों को ले जाते हैं। जब नमाज पढ़ कर लोग आते हैं तब इन बच्चों पर फूँकते हैं। भोले हिन्दू समझते हैं कि इससे उनके बच्चे स्वस्थ हो जायँगे। इसी तरह हिन्दू ताजिया की पूजा करते और कब्रों पर चादर चढ़ाते हैं। ऐसा न करना चाहिये।

रामचन्द्र——तावीज पहनना कैसा है?

स्वामी जी——तावीज, कंठी, माला आदि सब झूँठे और लोगों को ठगने के लिये होते हैं। आजकल समाचार पत्रों में, तावीजों के बड़े बड़े नोटिस छपते हैं——अमुक से परीक्षा में पास हो जाओगे। अमुक से नौकरी लग जायगी। अमुक से विवाह हो जायगा। इन नोटिसों को पढ़ कर भोले-भाले लोग ठगे जाते हैं। बहुत से विद्यार्थी पढ़ना छोड़ कर तावीज मंगाते हैं और विश्वास करते हैं कि वे परीक्षा में सफल हो जायंगे। इसी प्रकार पुत्र-जन्म, नौकरी आदि के लिये हज़ारों व्यक्ति अपने धन का नाश करते हैं।

शिवदत्त——कुपात्र और सुपात्र किसे कहते हैं?

स्वामी जी——जो छली, कपटी, स्वार्थी विषयी, काम क्रोध मोह लोभ से युक्त, परहानि करनेवाले, लंपटी, मिथ्यावादी, अविद्वान्, कुसंगी, आलसी जो कोई दाता

हो उसके पास बारम्बार माँगना, धरना देना, न किये पश्चात् भी हठता से मांगते ही जाना, सन्तोष न होना, जो न दे उसकी निन्दा करना, शाप और गाली प्रदानादि देना, अनेक बार जो सेवा करे और एक बार न करे तो उसका शत्रु बन जाना, ऊपर से साधु का वेश बना लोगों को बहका कर ठगना और अपने पास पदार्थ हो तो भी मेरे पास कुछ भी नहीं है कहना, सबको फुसला-फुसलू कर स्वार्थ सिद्ध करना, रात-दिन भीख मांगने ही में प्रवृत्त रहना, निमन्त्रण दिये पर यथेष्ट भङ्गादि मादक द्रव्य खा पीकर बहुतसा पराया पदार्थ खाना, पुनः उन्मत्त होकर प्रमादी होना, सत्य मार्ग का विरोध और झूठ मार्ग में अपने प्रयोजनार्थ चलना, वैसे अपने चेलों को केवल अपनी ही सेवा करने का उपदेश करना, अन्य योग्य पुरुषों की सेवा करने का नहीं, सद्विद्यादि प्रवृत्ति के विरोधी, जगत् के व्यवहार अर्थात् स्त्री, पुरुष, माता, पिता, सन्तान, राजा, प्रजा, इष्ट मित्रों में अप्रीति कराना कि ये सब असत्य हैं और जगत् भी मिथ्या है, इत्यादि दुष्ट उपदेश करना आदि कुपात्रों के लक्षण हैं। और जो ब्रह्म-चारी, जितेन्द्रिय, वेदादि विद्या के पढ़ने पढ़ानेहारे, सुशील, सत्यवादी, परोपकारप्रिय, पुरुषार्थी, उदार, विद्या धर्म की निरन्तर उन्नति करनेहारे, धर्मात्मा, शान्त, निन्दा स्तुति में हर्ष शोकरहित, निर्भय, उत्साही, योगी, ज्ञानी सृष्टिक्रम,

वेदाज्ञा, ईश्वर के गुण कर्म, स्वभावानुकूल वर्त्तमान करने-हारे, न्याय की रीतियुक्त पक्षपातरहित सत्योपदेश और सत्यशास्त्रों के पढ़ने पढ़ानेहारे के परीक्षक, किसी की लल्लो पत्तो न करें, प्रश्नों के यथार्थ समाधानकर्त्ता, अपने आत्मा के तुल्य अन्य का भी सुख, दुःख, हानि लाभ समझने वाले, अविद्यादि क्लेशहठ, दुराग्रहाऽभिमानरहित, अमृत के समान अपमान और विष के समान मान को समझने वाले सन्तोषी, जो कोई प्रीति से जितना देवे उतने ही से प्रसन्न, एक बार आपत्काल में मांगे भी न देने वा वर्जने पर भी दुःख वा बुरी चेष्टा न करना, वहां से झट लौट जाना, उसकी निन्दा न करना, सुखी पुरुषों के साथ मित्रता, दुखियों पर करुणा, पुण्यात्माओं से आनन्द और पापियों से "उपेक्षा अर्थात् रागद्वेषरहित रहना, सत्यमानी, सत्यवादी, सत्यकारी, निष्कपट, ईर्ष्याद्वेषरहित, गंभीराशय, सत्पुरुष, धर्म से युक्त और सर्वथा दुष्टाचार से रहित, अपने तन मन धन को परोपकार करने में लगानेवाले, पराये सुख के लिये अपने प्राणों को भी समर्पितकर्त्ता इत्यादि शुभलक्षणयुक्त सुपात्र होते हैं। परन्तु दुर्भिक्षादि आपत्काल में अन्न, जल, वस्त्र, और औषध पथ्य स्थान के अधिकारी सब प्राणीमात्र हो सकते हैं?

कुरीतियों के विषय में अधिक जानना हो तो स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज के बनाये सत्यार्थ

प्रकाश का दूसरा, दसवां और ग्यारहवां समुल्लास पढ़ना चाहिये।

भजन

प्यारे आर्य समाज ! तुझ पर जाऊँ बलिहार ॥
आर्य जाति के सत्य सुधारक ! वेद धर्म के प्रबल प्रचारक !
अघ अधर्म पाखण्ड सँहारक ! दलितों के तारक उद्धारक !
दुखियों के अधार। तुझ पर जाऊँ बलिहार ॥

दीन, अनाथ भूख के मारे, फिरते थे हा ? द्वारे द्वारे।
धर्म कर्म को छोड़ बिचारे, बनते थे औरों के प्यारे।
उनको लिया उबार। तुझ पर जाऊँ बलिहार ॥

जड़ पूजा करनी छुड़वाई। एक ईश की भक्ति सिखाई।
असत अनीति कुरीति मिटाई। उत्तम वैदिक रीति चलाई।
कर के धर्म प्रचार। तुझ पर जाऊँ बलिहार ॥

जहाँ कहीं भी जाऊँगा मैं। तेरे ही गुण गाऊँगा मैं।
तेरे नियम निभाऊँगा मैं। तुझ पर भेंट चढ़ाऊँगा मैं।
तन, मन, धन, घर-द्वार। तुम जाऊँ बलिहार ॥

प्रान्त प्रान्त में नगर नगर में। डगर डगर में अरु घर घर में।
हो 'प्रकाश' तेरा जग भर में। बोले दुनियाँ ऊँचे स्वर में।
तेरी जय जय कार। तुझ पर जाऊँ बलिहार ॥

* आरती *

ओ३म् जय जगदीश हरे पिता जय जगदीश हरे।
भक्त जनन के संकट क्षण में दूर करे ॥ओ०॥
जो ध्यावे फल पावै, दुःख विनशे मन का।
सुख सम्पत्ति घर आवे, कष्ट मिटै तन का ॥ओ०॥
मात पिता तुम मेरे शरण गहूँ किसकी।
तुम बिन और न दूजा, आश करूँ जिसकी ॥ओ०॥
तुम पूर्ण परमात्मन् तुम अन्तर्यामी।
पार ब्रह्म परमेश्वर तुम सब के स्वामी ॥ओ०॥
तुम करुणा के सागर, तुम पालनकर्त्ता।
मैं अबोध अज्ञानी कृपा करो भर्त्ता ॥ओ०॥
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।
किस विधि मिलूँ दयामय तुमको, मैं कुमती ॥ओ०॥
दीन बन्धु दुःख हरता, तुम रक्षक मेरे।
करुणा हस्त बढ़ाओ, शरण पड़ा तेरे ॥ओ०॥
विषय विकार मिटाओ, शुद्ध करो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सज्जन की सेवा ॥ओ०॥